डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

अपत्नी

ममता कालिया

हम लोग अपने जूते समुद्र तट पर ही मैले कर चुके थे। जहाँ ऊंची - ऊंची सूखी रेत थी, उसमें चले थे और अब हरीश के जूतों की पॉलिश व मेरे पंजों पर लगी क्यूटेक्स धुंधली हो गयी थी। मेरी साड़ी क़ी परतें भी इधर-उधर हो गयीं थीं। मैंने हरीश से कहा, उन लोगों के घर फिर कभी चलेंगे।

हम कह चुके थे लेकिन!

मैं ने आज भी वही साड़ी पहनी हुई है। मैं ने बहाना बनाया। वैसे बात सच थी। ऐसा सिर्फ लापरवाही से हुआ था। और भी कई साड़ियां कलफ लगी रखीं थीं पर मैं, पता नहीं कैसे यही साड़ी पहन आई थी।

तुम्हारे कहने से पहले मैं यह समझ गया था। हरि ने कहा। उसे हर बात का पहले से ही भान हो जाता था, इससे बात आगे बढाने का कोई मौका नहीं रहता। फिर हम लोग चुप चुप चलते रहते, इधर उधर के लोगों व समुद्र को देखते हुए। जब हम घर में होते, बहुत बातें करते और बेफिक्री से लेटे लेटे ट्रांजिस्टर सुनते। पर पता नहीं क्यों बाहर आते ही हम नर्वस हो जाते। हरि बार बार अपनी जेब में झांक कर देख लेता कि पैसे अपनी जगह पर हैं कि नहीं, और मैं बार बार याद करती रहती कि मैं ने आलमारी में ठीक से ताला लगाया कि नहीं।

हवा हमसे विपरीत बह रही थी। हरीश ने कहा, तुम्हारी चप्पलें कितनी गन्दी लग रही हैं। तुम इन्हें धोती क्यों नहीं?

कोई बात नहीं, मैं इन्हें साड़ी में छिपा लूंगी। मैं ने कहा ।

हम उन लोगों के घर के सामने आ गये थे। हमने सिर उठा कर देखा, उनके घर में रोशनी थी।

उन्हें हमारा आना याद है।

उन्हें दरवाजा खोलने में पांच मिनट लगे। हमेशा की तरह दरवाजा प्रबोध ने खोला। लीला लेटी हुई थी। उसने उठने की कोई कोशिश न करते हुए कहा, मुझे हवा तीखी लग रही थी। उसने मुझे भी साथ लेटने के लिये आमंत्रित किया। मैं ने कहा, मेरा मन नहीं है। उसने बिस्तर से मेरी ओर फिल्मफेयर फेंका। मैंने लोक लिया।

हरि आंखें घुमा घुमा कर अपने पुराने कमरे को देख रहा था। वहा यहां बहुत दिनों बाद आया था। मैं ने आने ही नहीं दिया था। जब भी उसने यहां आना चाहा था, मैं ने बियर मंगवा दी थी और बियर की शर्त पर मैं उसे किसी भी बात से रोक सकती थी। मुझे लगता था कि हरि इन लोगों से ज्यादा मिला तो बिगड ज़ायेगा। शादी से पहले वह

यहीं रहता था। प्रबोध ने शादी के बाद हमसे कहा था कि हम सब साथ रह सकते हैं। एक पलंग पर वे और एक पर हम सो जाया करेंगे, पर मैं घबरा गई थी। एक ही कमरे में ऐसे रहना मुझे मंजूर नहीं था, चाहे उससे हमारे खर्च में काफी फर्क पडता। मैं तो दूसरों की उपस्थिति में पांव भी ऊपर समेट कर नहीं बैठ सकती थी। मैं ने हरि से कहा था, मैं जल्दी नौकरी ढूँढ लूंगी, वह अलग मकान की तलाश करे।

प्रबोध ने बताया, उसने बाथरूम में गीज़र लगवाया है। हरीश ने मेरी तरफ उत्साह से देखा, चलो देखें।

हम लोग प्रबोध के पीछे पीछे बाथरूम में चले गये। उसने खोलकर बताया। फिर उसने वह पैग दिखाया जहां तौलिया सिर्फ खोंस देने से ही लटक जाता था। हरि बच्चों की तरह खुश हो गया।

जब हम लौट कर आये लीला उठ चुकी थी और ब्लाउज क़े बटन लगा रही थी। जल्दी जल्दी में हुक अन्दर नहीं जा रहे थे। मैं ने अपने पीछे आते हरि और प्रबोध को रोक दिया। बटन लगा कर लीला ने कहा, आने दो, साड़ी तो मैं उनके सामने भी पहन सकती हूँ।

वे अन्दर आ गये।

प्रबोध बता रहा था, उसने नए दो सूट सिलवाये हैं और मखमल का क्विल्ट खरीदा है, जो लीला ने अभी निकालने नहीं दिया है। लीला को शीशे के सामने इतने इत्मीनान से साड़ी बांधते देख कर मुझे बुरा लग रहा था।

और हरि था कि प्रबोध की नई माचिस की डिबिया भी देखना चाहता था। वह देखता और खुश हो जाता जैसे प्रबोध ने यह सब उसे भेंट में दे दिया हो।

लीला हमारे सामने कुरसी पर बैठ गई। वह हमेशा पैर चौड़े क़रके बैठती थी, हालांकि उसके एक भी बच्चा नहीं हुआ था। उसके चेहरे की बेफिक्री मुझे नापसंद थी। उसे बेफिक्र होने का कोई हक नहीं था। अभी तो पहली पत्नी से प्रबोध को तलाक भी नहीं मिला था। और फिर प्रबोध को दूसरी शादी की कोई जल्दी भी नहीं थी। मेरी समझ में लड़की को चिन्तित होने के लिये यह पर्याप्त कारण था।

उसे घर में कोई दिलचस्पी नहीं थी। उसने कभी अपने यहाँ आने वालों से यह नहीं पूछा कि वे लोग क्या पीना चाहेंगे। वह तो बस सोफे पर पांव चौड़े कर बैठ जाती थी।

हर बार प्रबोध ही रसोई में जाकर नौकर को हिदायत देता था। इसलिये बहुत बार जब हम चाय की आशा करते होते थे, हमारे आगे अचानक लेमन स्क्वैश आ जाता था। नौकर स्क्वैश अच्छा बनाने की गर्ज से कम पानी ज्यादा सिरप डाल लाता था। मैं इसलिये स्क्वैश खत्म करते ही मुंह में जिन्तान की एक गोली डाल लेती थी।

प्रबोध ने मुझसे पूछा, कहीं एप्लाय कर रखा है?

नहीं- मैंने कहा ।

ऐसे तुम्हें कभी नौकरी नहीं मिलनी। तुम भवन वालों का डिप्लोमा ले लो और लीला की तरह काम शुरु करो।

मैं चुप रही। आगे पढने का मेरा कोई इरादा नहीं था। बल्कि मैं ने तो बी ए भी रो रोकर किया है। नौकरी करना मुझे पसन्द नहीं था। वह तो मैं हरि को खुश करने के लिये कह देती थी कि उसके दफ्तर जाते ही मैं रोज

आवश्यकता है कॉलम ध्यान से पढ़ती हूँ और नौकरी करना मुझे थ्रिलिंग लगेगा।

फिर जो काम लीला करती थी उसके बारे में मुझे शुबहा था। उसने कभी अपने मुंह से नहीं बताया कि वह क्या करती थी। हरि के अनुसार, ज्यादा बोलना उसकी आदत नहीं थी। पर मैं ने आज तक किसी वर्किंग गर्ल को इतना चुप नहीं देखा था।

प्रबोध ने मुझे कुरेद दिया था। मैं भी कुरेदने की गर्ज से कहा, सूट क्या शादी के लिये सिलवाये हैं?

प्रबोध बिना झेंपे बोला - शादी में जरीदार अचकन पहनूंगा और सन एण्ड सैण्ड में दावत दूंगा। जिसमें सभी फिल्मी हस्तियां और शहर के व्यवसायी आयेंगे। लीला उस दिन इम्पोर्टेड विग लगायेगी और रूबीज़ पहनेगी।

लीला विग लगा कर, चौडी टांगे करके बैठेगी - यह सोच कर मुझे हंसी आ गई। मैं ने कहा, शादी तुम लोग क्या रिटायरमेन्ट के बाद करोगे क्या?

लीला अब तक सुस्त हो चुकी थी। मुझे खुशी हुई। जब हम लोग आये थे उसे डनलप के बिस्तर में दुबके देख मुझेर् ईष्या हुई थी। इतनी साधारण लडक़ी को प्रबोध ने बांध रखा था, यह देख कर आश्चर्य होता था। उसकी साधारणता की बात मैं अकसर हरि से करती थी। हरि कहता था कि लीला प्रबोध से भी अच्छा आदमी डिजर्व करती थी। फिर हमारी लडाई हो जाया करती थी। मुझे प्रबोध से कुछ लेना देना नहीं था। शायद अपने नितान्त अकेले और ऊबे क्षणों में भी मैं प्रबोध को ढलि न देती पर फिर भी मुझे चिढ होती थी कि उसकी पसन्द इतनी सामान्य है।

प्रबोध ने मेरी ओर ध्यान से देखा, तुम लोग सावधान रहते हो न अब?

मुझे सवाल अखरा। एक बार प्रबोध के डाक्टर से मदद लेने से ही उसे यह हक महसूस हो, मैं यह नहीं चाहती थी। और हरीश था कि उसकी बात का विरोध करता ही नहीं था।

प्रबोध ने कहा, आजकल उस डॉक्टर ने रेट बढा दिये हैं। पिछले हफ्ते हमें डेढ हजार देना पड़ा।

लीला ने सकुचाकर, एक मिनट के लिये घुटने आपस में जोड़ लिये।

कैसी अजीब बात है, महीनों सावधान रहो और एक दिन के आलस से डेढ़ हज़ार रूपये निकल जायें। प्रबोध बोला।

हरि मुस्कुरा दिया, उसने लीला से कहा, आप लेटिये, आपको कमजोरी महसूस हो रही होगी।

नहीं। लीला ने सिर हिलाया।

मेरा मूड खराब हो गया। एक तो प्रबोध का ऐसी बात शुरु करना ही बदतमीजी थी, ऊपर से इस सन्दर्भ में हरि का लीला से सहानुभूति दिखाना तो बिलकुल नागवार था। हमारी बात और थी। हमारी शादी हो चुकी थी। बल्कि जब

हमें जरूरत पड़ी थी तो मुझे सबसे पहले लीला का ध्यान आया था। मैं ने हरि से कहा था, चलो लीला से पूछें, उसे ऐसे ठिकाने का जरूर पता होगा।

लीला मेरी तरफ देख रही थी, मैं ने भी उसकी ओर देखते हुए कहा, तुम तो कहती थी, तुमने मंगलसूत्र बनाने का आर्डर दिया है।

हाँ, वह कबका आ गया। दिखाऊं? लीला आलमारी की तरफ बढ गई।

प्रबोध ने कहा, हमने एक नया और आसान तरीका ढूंढा है, लीला जरा इन्हें वह पैकेट दिखाना...।

मुझे अब गुस्सा आ रहा था। प्रबोध कितना अक्खड़ है - यह मुझे पता था। इसीलिये हरि को मैं इन लोगों से बचा कर रखना चाहती थी।

हरि जिज्ञासावश उसी ओर देख रहा है जहाँ लीला आलमारी में पैकेट ढूंढ रही है।

मैं ने कहा, रहने दो मैं ने देखा है।

प्रबोध ने कहा, बस ध्यान देने की बात यह है कि एक भी दिन भूलना नहीं है। नहीं तो सारा कोर्स डिस्टर्ब। मैं तो शाम को जब नौकर चाय लेकर आता है तभी एक गोली ट्रे में रख देता हूँ।

लीला आलमारी से मंगलसूत्र लेकर वापस आ गई थी, बोली - कभी किसी दोस्त के घर इनके साथ जाती हूँ तब पहन लेती हूँ।

मैं ने कहा, रोज तो तुम पहन भी नहीं सकती ना कोई मुश्किल खडी हो सकती है। कुछ ठहर कर मैं ने सहानुभूति से पूछा, अब तो वह प्रबोध को नहीं मिलती ?

लीला ने कहा, नहीं मिलती।

उसने मंगलसूत्र मेज पर रख दिया।

प्रबोध की पहली पत्नी इसी समुद्र से लगी सड़क के दूसरे मोड़ पर अपने चाचा के यहाँ रहती थी। हरि ने मुझे बताया था, शुरु-शुरु में जब वह प्रबोध के साथ समुद्र पर घूमने जाता था, उसकी पहली पत्नी अपने चाचा के घर की बालकनी में खड़ी रहती थी और प्रबोध को देखते ही होंठ दांतों में दबा लेती थी। फिर बालकनी में ही दीवार से लगकर बाँहों में सिर छिपा कर रोने लगती थी। जल्दी ही उन लोगों ने उस तरफ जाना छोड़ दिया था।

प्रबोध ने बात का आखिरी टुकड़ा शायद सुना हो क्योंकि उसने हमारी तरफ देखते हुए कहा, गोली मारो मनहूसों को! इस समय हम दुनिया के सबसे दिलचस्प विषय पर बात कर रहे हैं। क्यों हरि, तुम्हें यह तरीका पसन्द आया?

हरि ने कहा, पर यह तो बहुत भुलक्कड़ है। इसे तो रात को दांत साफ करना तक याद नहीं रहता।

मैं कुछ आश्वस्त हुई। हरि ने बातों को ओवन से निकाल दिया था। मैं ने खुश होकर कहा, पता नहीं मेरी याददाश्त को शादी के बाद क्या हो गया है? अगर ये न हों तो मुझे तो चप्पल पहनना भी भूल जाये।

हरि ने अचकचा कर मेरे पैरों की तरफ देखा। वादे के बावजूद मैं पांव छिपाना भूल गई थी।

उठते हुए मैं ने प्रबोध से कहा, हम लोग बरट्रोली जा रहे हैं, आज स्पेशल सेशन है, तुम चलोगे?

प्रबोध ने लीला की तरफ देखा और कहा, नहीं अभी इसे नाचने में तकलीफ होगी।

शीर्ष पर जाएँ

डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

कामयाब

ममता कालिया

हमारा घर उनके घर से सटा हुआ था। दोनों घरों के बीच दीवार थी जिसमें कोई खिड़की नहीं थी। काफी दिन सियासत में पापड़ बेल कर अब वे विधान परिषद के सदस्य बन गए थे। उनका एक पैर लखनऊ और एक इलाहाबाद रहता। दोस्ताना तबीयत पाई थी। अगर एक दिन को भी घर आते, हमसे जरूर मिलते। कई बार ऐसा भी हुआ कि दोपहर में हमारे ही घर पर एक लंबी झपकी मार कर आराम कर लिया।

दरअसल उनके ऊपर लखनऊ की बेगम कुछ इस कदर मेहरबान थीं कि हाफिज भाई की अपनी बेगम हर दम तिनतिनाई रहतीं। बेगम लखनपुर ने पैसा खर्च कर उन्हें लखनपुर से विधायक बनवा दिया। हाफिज भाई लखनपुर खास से एक छोटा सा रिसाला 'आवाज' निकालते थे जिसकी बिना पर उन्हें पत्रकार मान लिया गया। बेगम लखनपुर जानती थीं कि दो चार नेता जेब में रखकर ही वे नाम कमा सकती हैं। उनके शौहर, नवाब लखनपुर, लंबे अरसे से, बाईं तरफ के फालिज की चपेट में थे। वे अपने कमरे में पड़े रहते या सुबह के वक्त पहिया कुर्सी में अपने बगीचे की सैर करते दिखाई देते। उनके शरीर का दायाँ हिस्सा ठीक था पर वे दिन भर में अपने दाएँ पाँव और हाथ पर जोर डाल कर उस हिस्से को भी थका डालते। मालिशवाला दिन में दो बार आकर उनकी मालिश कर जाता लेकिन उनके अंग अंग में हर वक्त दर्द रहता। बेगम लखनपुर शौकीन महिला थीं। उन्हें किस्से, कहानियाँ, लतीफे और पुराने गाने सुनने का शौक था। हाफिज भाई ने उनकी यह नब्ज पकड़ रखी थी। आलम यह था कि अगर बेगम लखनपुर को रात में नींद न आती तो वे फौरन हुक्म करतीं, 'हाफिज साहब को बुलाया जाय।' नवाब बिस्तर पर लेटे लेटे कान खड़े कर लेते। उन्हें नींद बहुत कम आती और जब आती तो नींद से ज्यादा खर्राटे आते। जैसे ही खर्राटे टूटते, उनकी नींद भी खुल जाती। उन्हें घर में मेहमानों का या बाहरी आदमियों का आना पसंद नहीं था पर हाफिज भाई के आने पर वे नहीं भड़कते। हाफिज थे भी बड़े व्यवहार कुशल। सबसे पहले वे नवाब साहब के पास बैठ कर उनकी खैरियत पूछते, फिर मुहब्बत से कहते, 'नवाब साहब क्या लीजिएगा, पानडली या सिगरेट?

हाफिज के पास चाँदी की डिब्बी में मगही पान के बीड़े, जोड़े में लगे होते और जेब में 120 नंबर का जर्दा। जोड़ा पान मुँह में रखते ही नवाब साहब की तबीयत मस्त हो आती। इसके बाद दीवानखाने में हाफिज, बेगम लखनपुर के लिए, किस्सों की पिटारी खोल कर बैठ जाते। बेगम लखनपुर हँसते हँसते लोट पोट हो जातीं। कई बार के सुने हुए किस्से भी वे उसी शिद्दत से सुनतीं। आखिरकार हाफिज की आँखें झपकने लगतीं। वे उठ जाते, 'चलते हैं बेगम साहिबा, शब्बा खैर'।

हमने भी हाफिज भाई से बेशुमार लतीफे सुन रखे थे। सुनाते वक्त वे खुद भी अपनी बात का खूब लुत्फ उठाते। उनकी बुलंद आवाज में मामूली बातें भी गैरमामूली लगतीं। शाम के वक्त कभी-कभी वे हमारे घर में व्हिस्की के दो एक पैग भी ले लेते। ऐसे दिन में वे अपने किस्सों में खुद को शहसवार बना लेते। वे भूल जाते कि एक बार पहले भी यह किस्सा दूसरी तरह से सुना चुके हैं। इंदिरा गांधी को लोकनाथ की जलेबी पसंद थी। यह किस्सा वे एक बार फिर शुरू कर देते जिसका अंत इस तरह होता, 'और आप यकीन करेंगे मैंने सुबह आठ बजे, अपने लोकनाथ भैरव जलेबीवाले को सात रेसकोर्स रोड पहुँचा दिया, कढ़ाई, पौनी, कनस्तर समेत।' मैडम भौचक्की रह गईं, उन्होंने कहा, 'हाफिज भाई आपका भी जवाब नहीं।'

ऐसे ही किसी लम्हे में उनके घर से बुलावा आ जाता। उनका मूड उखड़ जाता। वे झुँझला कर अपने होठों से हटा कर सिगरेट कुचल देते। वे कहते, 'पता नहीं क्यों बेगम के सामने जाकर मेरी सारी शराब पानी बन जाती है।'

हाफिज की बेगम उनका विलोम थीं। कहने को तहमीना हमारी पड़ोसन थीं, उनसे हमारा मिलना जुलना नहीं के बराबर था। उनका ज्यादा वक्त अपनी बेटियों की या अपने रक्तचाप की देखभाल में कटता। बगल की धोबी गली में उनकी बहन सईदा रहती थी। खाली वक्त वे वहाँ काटतीं। हम इस मुहल्ले में नए आए थे। अल्पसंख्यकों से भरी इस बस्ती में हमारा ज्यादा जोर इस बात पर था कि हम सबको बता दें कि हम छाप-तिलक वाले हिंदू नहीं हैं और हमारा सबसे पसंदीदा शायर गालिब है तो सबसे अजीज गायक मुहम्मद रफी और तलत महमूद। दिलीप और मीना कुमारी हमारे दिल पर राज करते रहे हैं और इन दिनों हम कुरान पाक का हिंदी तर्जुमा पढ़ रहे हैं।

हाफिज हमसे कहते, 'अमाँ तुम कट्टर नहीं हो यह साबित करने में अपनी जान क्यों हलकान करते हो। यह क्यों नहीं साबित करते कि तुम भी हम जैसे इनसान हो।' हम उनकी बातों के कायल हो जाते।

इधर जब से मुल्क में आतंकवाद बढ़ा, हर विधायक को एक-एक अंगरक्षक मिल गया था। उसका काम था, परछाई की तरह विधायक के पीछे-पीछे रहना। हाफिज को भी शैडो मिला। जब वे इलाहाबाद आते, शैडो उनके साथ आता।

सुबह के वक्त हाफिज अपनी भारी भरकम आवाज में पुकारते, 'शैडो भई अंदर जाकर देखो, चाय बन गई हो तो हमें भी ला दो और खुद भी पी लो।'

सभी विधायक अपने शैडो से खाना भी बनवाते। हाफिज कहते, 'अरे ये पंडत हमें दाल भात के सिवा क्या पका कर खिलाएगा? खाना तो हम अपनी बेगम के हाथ का ही खाएँगे।'

उनकी प्यारी बेगम तहमीना के माथे की त्योरियाँ इस बात से जरा भी सीधी न होतीं। वह बावर्चीखाने में पसीना पोंछती हुई बड़बड़ातीं, 'मुफ्त की नानबाई मिली हुई है इन्हें। खुद दुनिया जहान में घूमें, हमें बेटियों की आया बना कर डाल दिया है।' उनके घर में पैसों की खींचतान नहीं थी। अक्सर तहमीना रानी मंडी के सुनारों की दुकानों पर दिख जातीं। अगर कभी हमारी नजर पड़ जाती वे फौरन कहतीं, 'दो बेटियाँ ब्याहनी हैं, इनके लिए तो दो टोकरी जेवर भी कम पड़ेंगे।'

हाफिज दो एक दिन से ज्यादा घर में न टिकते। जाते हुए हमसे कहते, 'घर के बिस्तर पर नींद नहीं आती। रेल की ऐसी आदत पड़ गई है कि गाड़ी में सवार होते ही सो जाता हूँ।'

हाफिज की दोनों बेटियाँ, सना और सुबूही बेहद शोख और खूबसूरत थीं। सना इतनी गोरी थी कि उसके माथे की नीली नस हमेशा झलक मारती रहती। सुबूही भी आकर्षक थी लेकिन कुछ कम गोरी। सना चुप्पा थी तो सुबूही बातूनी। वह कहती, 'पापा ममी सना आपा की चाहे जितनी तारीफ करते रहें, दुनिया की दौड़ में अव्वल तो मैं ही आऊँगी।'

उसकी इस तेजी का थोड़ा अंदाज हमें भी था क्योंकि वह अपने दोस्तों से बातचीत, अपने घर के फोन से न कर, हमारे घर के फोन से करती।

उसने मुझसे कहा, 'आंटी अगर पूनम का फोन आए तो मुझे जरूर बुला दीजिएगा। बस छत पर से आवाज दे दीजिए, मैं फौरन आ जाऊँगी।'

कुछ दिनों की बातचीत सुनने के बाद मुझे यह अहसास हुआ कि जिसे वह पूनम का फोनकाल बताती थी, दरअसल वह पूनम के भाई का फोनकाल था। पूनम फोन मिला कर, अपनी आवाज मुझे सुना कर फोन अपने भाई क्षितिज को दे देती।

मेरा खयाल था हमें यह राज सुबूही के माँ-बाप को बता देना चाहिए। कुल दसवीं कक्षा में पढ़ने वाली बच्ची अपना भला-बुरा कैसे पहचान सकती है। लेकिन राजेश ने मुझे बरज दिया।

'दूसरों की जिंदगी में झाँकना गलत काम है। 16 साल की लड़की अपना भला-बुरा समझ सकती है। फिर हम पर भरोसा करती है जो टूट जाएगा।' राजेश का तर्क था। मन ही मन कसमसाकर रह गई मैं।

अपनी तरफ से बस इतना किया कि कई बार जब पूनम का फोन आया तो झूठ ही कह दिया, 'मैं अभी नहा रही हूँ या बाजार जा रही हूँ।'

घर से दूर और अलग रहते-रहते हाफिज आजाद परिंदे हो गए थे। वे बाहर खूब खुश रहते। उन्हें दारुलशफा में एक फ्लैट मिला हुआ था। लखनपुर में 'आवाज' दफ्तर के पीछे ही दो कमरों में उनकी रिहाइश का इंतजाम था। वे लगातार दौरा करते। बीच-बीच में इलाहाबाद आते लेकिन घर में मेहमान बने रहते।

उनसे मिलने वालों की तादाद काफी थी। सभी का सरकार में कोई न कोई काम फँसा रहता। हाफिज सबके साथ मुहब्बत से बोलते। काम हो न हो, फरियादी उनके पास खुश होकर लौटता। उनकी लोकप्रियता तहमीना के गले न उतरती। वह बेटियों को सुना कर कहती, 'तुम्हारे पापा सारी दुनिया से प्यार से बोलते हैं, बस बीवी के ऊपर तोप ताने रहते हैं।'

सना, सुबूही चुप मार जातीं। उन्हें अपने पिता से कोई शिकायत नहीं थी। पिता के सिर पर उनके सारे ऐश-ओ-आराम थे। दोनों लड़कियाँ अपने हेयरकट के लिए लखनऊ के 'शीलाज' पार्लर में जातीं। हाफिज तरक्की करते-करते विधायक से सांसद बन गए और दिल्ली पहुँच गए। उन्हें फीरोजशाह रोड पर एक शानदार बंगला मिल गया। हमारे पड़ोस का उनका छोटा सा घर मंजिल दर मंजिल ऊँचा होता गया। उनकी बीवी अधेड़ होती गई, उनकी बेटियाँ जवान होती गईं।

हाफिज भाई की कामयाबी का चर्चा जिस वक्त चलता लोग पहले उनकी तारीफों के पुल बांधते, फिर आवाज दबा कर कहते, 'उनकी पीठ पर लखनऊ की बेगम सलमा का हाथ रहा। उन्हीं की बदौलत उनका यह टूटा-फूटा खपरैला मकान आज तिमंजिली इमारत बन गया। लखनपुर खास की हवेली, सलमा बेगम ने पूरी तुड़वाकर नए सिरे से बनवाई। हाफिज भाई ने रातों-रात ट्रकों में भरवा कर सारा संगमरमर, फर्नीचर, यहाँ तक कि बाथरूम के हौज और टंकियाँ भी रानी मंडी पहुँचवा दीं। अंदर किसी को जाने की इजाजत नहीं है पर सुना है कि उनका मकान एकदम महल बन गया है।'

जितना यह सच था, उतना यह भी सच था कि इस महल में रानी और दो राजकुमारियाँ कैद में पड़ी बुलबुलें थीं।

तहमीना का अपनी बड़ी बहन सईदा के घर उठना बैठना था। सईदा के शौहर की तीन साल पहले तपेदिक से मौत हो चुकी थी। उसके दोनों बेटे मिल कर, धोबी गली में ही पतंगें बेचने का काम करते। इस काम में कमाई खास नहीं थी पर उनका दिल लगा रहता। सईदा को वहम था कि ज्यादा मेहनत वाले कामों में फँस कर कहीं नदीम और फहीम भी अपने बाप की तरह तपेदिक के मरीज न हो जाएँ। नदीम और फहीम अपने हाल पर खुश थे। मुहल्ले के लड़के उन्हें छोटे मियाँ बड़े मियाँ कह कर इज्जत बख्शते और सलाम करते। शाम के वक्त वे अपनी दुकान पर कैरम के जवाबी मैच करवाते। मुहल्ले की लड़कियों की जासूसी करना, लखन पानवाले के अड्डे पर खड़े रहना और नए लड़कों को पतंग के दाँव पेंच समझाना उनके अहम काम थे। उनकी पढ़ाई नवीं क्लास से आगे नहीं बढ़ पाई क्योंकि तभी प्रदेश भर में नकल विरोधी अध्यादेश जारी हो गया। नदीम और फहीम ने खत्री पाठशाला से दसवीं का परीक्षा फार्म तो जरूर भरा लेकिन ऐन इम्तिहान के दिन दोनों घर पर बैठ गए। माँ को समझा दिया कि, 'बड़ा खराब कानून पास हुआ है इस बार। हाल में बैठ कर जो दाएँ से बाएँ देखा तो हथकड़ी पड़ जाएगी। जमानत भी नहीं होगी, सीधे हवालात।' सईदा आपा घबरा गईं। उन्होंने दोनों बेटों की बलाएँ उतारीं और कहा, 'चलो हमें कौन सी नौकरी करवानी है, हमारे चिराग सलामत रहें।'

सईदा की हार्दिक अभिलाषा थी कि नदीम का ब्याह हाफिज की बड़ी बेटी सना से हो जाए। लेकिन एक तो सना नदीम से आठ माह बड़ी थी, दूसरे बीए के आखिरी साल में बैठने वाली थी। फिर तहमीना भी इस रिश्ते को नकार चुकी थी। उसका खयाल था सना का रिश्ता किसी शाही खानदान में होगा।

सना इस बार हमारे घर आई तो तिनतिना रही थी। उसने कहा, 'आंटी, नदीम भाई ने हमारे ऊपर फतवा जारी किया है कि हम खुले मुँह यूनिवर्सिटी नहीं जा सकती। उनके हिसाब से हमारा हिजाब पहनना जरूरी है। दूसरे जींस पहनने पर भी पाबंदी लगाई है। आप बताइए आंटी आज के जमाने में इन दकियानूसी हिदायतों का क्या मतलब है। मैंने अम्मी से कह दिया जींस इतने मोटे कपड़े की होती है कि आराम से निकल जाते हैं। सबसे बड़ी बात ये, पाबंदियाँ लगाने वाले नदीम भाई आखिर होते कौन हैं?'

'तुम्हारे रिश्तेदार हैं और तुम्हारी अम्मी इस रिश्ते को निभाती भी हैं।'

'तो फिर अम्मी पर लगाएँ न पाबंदी। पापा ने हमें कभी नहीं रोका। पापा कहते हैं चाहे जो करो बस पढ़ाई में अव्वल आओ।'

इन लड़कियों के पापा को कभी इतनी फुर्सत न मिली कि उनकी शादी की फिक्र करें। उनका बहुत सा वक्त संसद के सत्रों में बँधा रहता। बाकी वक्त उन्होंने बेगम लखनपुर के हवाले कर दिया।

सना और सुबूही और उनकी माँ तहमीना के अपने-अपने तहखाने बनते गए।

पहले मुहर्रम और चेहल्लुम पर ये माँ बेटियाँ खाली वक्त में मर्सिये और नौहों का रियाज किया करती थीं। इन्हीं के इमामबाड़े से जुलूस उठा करता। जुलूस अब भी उठता लेकिन अब वे स्टीरियो पर मर्सिये का कैसेट लगा कर, खुद अंदर वाले कमरे में इकट्ठी बैठ कर पाकिस्तानी धारावाहिक देखती रहतीं।

हाफिज के आने पर तहमीना फिर पाँच वक्त की नमाज पढ़ने लगतीं। हालाँकि जाँनमाज कहाँ पड़ा है यह ढूँढ़ने में काफी मशक्कत पड़ती।

अगर लड़कियों को यूनिवर्सिटी में देर हो जाती तो तहमीना घर आए शौहर को सफाई देतीं, 'आजकल दोनों बहनें लायब्रेरी में बैठ कर पढ़ाई करती हैं। आप ही सोचिए, ऐसी मोटी-मोटी किताबें कैसे तो उठा कर लाएँ?'

हाफिज भाई के आने की खबर अक्सर पहले ही अखबारों में छप जाती। तरह-तरह के फरियादी घर के चक्कर काटने लगते। फल, मेवा, मिठाई की डलियाँ पहुँचने लगतीं। लड़कियाँ अपने रंग-बिरंगे कपड़े और जींस जैकेट, सब उठा कर रख देतीं और एकदम दकियानूसी सलवार कमीज धारण कर लेतीं। तहमीना अपने बाल मेहँदी से रँग लेतीं। नसीबन और हाजरा तीनों ड्योढ़ियों का रगड़-रगड़ कर पोंछा लगातीं। दो दिन की मेहनत में उनका मकान इंस्पेक्शन बंगलों जैसा सँवर जाता।

हम भी अपने कमरे के तख्त की चादर बदल लेते, बिखरे हुए एलपी समेट कर एक जगह चिन देते और स्टीरियो को झाड़ पोंछ कर चमका देते।

कभी कभी हाफिज भाई राजेश को समझाते, 'अमा तुम अदीब हो, पत्रकार हो यह सब तो ठीक है। पर तुम्हें थोड़ा प्रैक्टिकल भी होना चाहिए। अफसाने लिखने से पेट नहीं भरता, तुम्हें कोई रोजगार करना चाहिए। कल को घर में बाल बच्चे होंगे तो खर्चे बढ़ेंगे, जिम्मेदारियाँ बढ़ेंगी।'

राजेश के अंदर अपनी आलोचना सुनने की बरदाश्त बिल्कुल नहीं थी। वह पलट कर कहता, 'हाफिज भाई आप पैसे को बहुत बड़ी ताकत समझते हैं और कामयाबी को दौलत। मैं कलम की ताकत को इस सब से ऊपर मानता हूँ।'

'तुम्हारी उम्र में मेरे भी ऐसे खयालात थे पर हालात ने मुझे काफी सबक सिखाए। जब मैं सिर्फ खबरनवीसी करता था, मेरी बच्चियाँ दूध को तरस जाती थीं। मैंने तभी तय कर लिया कि कामयाबी हासिल कर के रहूँगा।' हाफिज हमें कामयाबी का ककहरा सिखाते। राजेश तुनक कर कहता, 'कामयाबी और तसल्ली के बीच मैंने तसल्ली चुनी है।'

'तसल्ली बड़ी तकलीफदेह होती है। आप पत्थर की तरह एक ही जगह में पड़े रह जाते हैं। बरखुरदार अपनी पिटारी से बाहर निकल कर देखो, दुनिया किस रफ्तार से बढ़ रही है।' ऐसे बहस वाले दिन हमें नागवार लगते। हाफिज अपने आप को बेहद कामयाब इनसान मानते। उनकी नसीहत पर तहमीना ने यह टोटका अपना रखा था कि जब भी वे घर आते, वह तेल का भरा, चौड़ा कटोरा उनके सामने पेश करती। वे तेल के कटोरे में झाँक कर अपना चेहरा निहारते और आँख बंद कर एक दुआ बुदबुदाते। उसके बाद कटोरे का तेल किसी फकीर को दे दिया जाता। अगर

कभी हाफिज भाई को खाँसी भी हो जाती, उनकी बेटियाँ कहतीं, 'हमारे पापा को दूसरों की नजर झट से लग जाती है।'

सना और सुबूही लखनऊ जाकर शीलाज ब्यूटी पार्लर में अपने बाल सेट करवातीं। उनकी सलीके से तराशी गई भवें और रोमरहित रेशमी बाँहें जता देतीं कि वे अपने रखरखाव पर काफी धन और समय खर्च करती हैं। दो एक बार उनके शैक्षिक प्रमाणपत्र और अन्य कागजात सत्यापित करते समय मैंने देखा था कि पिता की मासिक आय के कॉलम में वे मात्र 1000 रु लिखतीं, विधायक की यही निर्धारित आय होती होगी। इतनी आय में हाफिज दो घरों और दो बेटियों का खर्च कैसे उठा रहे थे जबकि इतने पैसों में एक घर चलाना भी आसान नहीं था। ये और कुछ अन्य सवाल ऐसे थे जो हमेशा हवा में लटके रहते। ये पूछे नहीं जा सकते थे। इनमें लोगों के दिमागी मिर्च-मसाले मिल जाने पर तरह-तरह की अफवाहें पैदा होतीं। एक अफवाह थी कि लखनपुर खास की हवेली टूटने के वक्त वहाँ का शाही खजाना हाफिज के हाथ लग गया, उसी के जलवे नजर आते हैं। दूसरी अफवाह थी कि हाफिज की बेगम तहमीना की माँ ने अपने गाने-बजाने की तमाम कमाई अशर्फियों की शक्ल में अपनी दोनों बेटियों को बाँट दी, उसी की बरकत दिखाई दे रही है। रानी मंडी की खासियत यह थी कि वहाँ हर मकान और परिवार के साथ कोई न कोई पुराना किस्सा नत्थी था। यहाँ के बाशिंदे अपने बाप-दादा की शान बान के किस्सों के सहारे अपनी मौजूदा बदहाली काट लेते। बहुतों को यहाँ नवाब कह कर पुकारा जाता जबकि इस गली में कोई नवाब परचून की दुकान चलाता तो कोई चाय बिस्कुट की।

अच्छे भले हम यहाँ रह रहे थे कि एक दिन हमें खबर मिली कि हमारे मकान का मालिक बदल गया है। हमारे मौजूदा मकान-मालिक ने यह मकान मय किरायेदार अपने एक दत्तक-पुत्र ओमप्रकाश के नाम कर दिया। उन्होंने अपने बीवी-बच्चों को उपेक्षित कर यह वसीयत कर डाली क्योंकि उनकी बीमारी में बीवी-बच्चे उनके काम नहीं आए जबकि ओमप्रकाश उन्हें हर पल हाजिर मिला। वसीयत के चंद महीनों बाद ही मकान-मालिक की मौत हो गई।

अगले ही हफ्ते ओमप्रकाश ने हमें मकान खाली करने का नोटिस दे डाला। अच्छा नहीं लगा। हमने तय कर लिया कि हम यहाँ नहीं रहेंगे। कुछ ही दिनों की दौड़धूप से शहर की घिचपिच से हटकर एक बेहतर मकान हमें मिल गया। यह घर बड़ा और हवादार था। सामने पब्लिक पार्क था और पीछे गंगा का कछार। बाजार कुछ फासले पर था पर फेरीवाले और ठेलेवाले भी दिन भर गुजरते। कुछ एक आदतें हमारी ऐसी थीं जो हमें पुराने घर की याद दिला देतीं। नए बाजार में मिलने वाले मसाले हमारे मुँह नहीं लग रहे थे। हमें अपने पुराने बाजार का गरम मसाला और पिसा जीरा याद आ जाता, कभी वहाँ के पापड़ और बड़ी की हुड़क उठती। हम तय करते एक दिन चौक जाकर यह सब लाया जाय।

ऐसे ही एक दिन जब हम चौक में खरीदारी कर रहे थे हमारा मन हुआ हाफिज भाई के यहाँ चला जाए। अपना पुराना घर देखने की भी ललक थी। राजेश बोले, 'आजकल संसद का सत्र नहीं है, हो सकता है हाफिज भाई आए हुए हों।'

मेरी मुखमुद्रा ताड़ कर उन्होंने जोड़ा, 'नहीं हुए तो बस दुआ सलाम कर खिसक लेंगे।'

हम बड़े चाव में अपने मुहल्ले की तरफ मुड़े। नुक्कड़ के पानवाले लखन के यहाँ ही हमें नवाब दिख गए। वे पान की गिलौरियाँ अपनी डिब्बी में सजा रहे थे।

'आज कैसे रास्ता भूल पड़े' उन्होंने कहा।

'कई बार सोचा, आना ही नहीं होता। सब खैरियत तो है न?'

'मत पूछिए, आपका मकान तो बिजलीघर वाले कबाड़ी ने खरीद लिया। आजकल उसे पूरा गिरवा कर वहाँ मार्केट बनवा रहा है।'

हमारा जी धक से रह गया। पता नहीं क्यों हम सोच रहे थे वह वैसा का वैसा हमें मिलेगा, बस उसके छज्जे पर किसी और के कपड़े सूखते होंगे।

इसका मतलब यह हुआ कि हमारे खाली करते ही हमारे मकान मालिक के दत्तक पुत्र ने इसे हाथोंहाथ बेच डाला।

मन उखड़ गया। सोचा वापस चले जाएँ, लेकिन नवाब हमें इसरार के साथ गली में ले आए, 'हाफिज भाई भी आए हुए हैं आजकल, उनसे तो मिलते जाइए।'

जहाँ हमारा घर था वहाँ मशीनों से बहुत गहरा गड्ढा बनाया हुआ था। गली में चारों तरफ मलबा और गंदगी दिखा रही थी। हाफिज भाई की ड्योढ़ी पर एक सुरक्षाकर्मी कार्बाइन लिए तैनात था।

हम अंदर घुसने लगे ही थे कि उसने रोका। साथ का सामान अपने पास के रैक पर रखवाया तब आगे बढ़ने का इशारा किया।

अगली ड्योढ़ी में वही शैडो खड़ा मिला। उसने हमें पहचान कर नमस्ते की और कमरे के द्वार तक ले आया।

हाफिज, तीन-चार आगंतुकों से घिरे हुए थे। दिन के वक्त भी कमरे में तीन ट्यूबलाइट जल रही थीं। इतने रोशन कमरे में हाफिज भाई बुझे हुए लग रहे थे।

'आइए भाभी, आइए राजेश भाई' कह कर उन्होंने इस्तेकबाल तो किया लेकिन उनके चेहरे पर कोई चमक नहीं आई। आगंतुकों से वे गर्दन की हरकत से बतियाते रहे।

उनके चले जाने तक हमारा भी इरादा उठने का हो गया।

मैंने कहा, 'मैं जरा अंदर जाकर बहनजी और बच्चों से मिल लूँ।'

हाफिज ने जल्दबाजी में कहा, 'लड़कियाँ तो मुंबई चली गई हैं। पढ़ाई करने और बेगम सईदा आपा के यहाँ गई हैं।

'अरे सना-सुबूही दोनों चली गईं। कौन सा कोर्स पढ़ रही हैं वहाँ?'

'हमें कहाँ, याद रहता है। इतने मसले याद रखने पड़ते हैं। आप बताइए, कैसे आना हुआ? हाफिज भाई ने थोड़ी अधीरता दिखाई।

'कुछ नहीं बस यहाँ से गुजर रहे थे तो आपका ख्याल आ गया।'

'बताइए साहब, दो साल में आपको एक बार हमारा ध्यान नहीं आया और आज आप चले आ रहे हैं कि हमारा खयाल आ गया।'

अब तक राजेश भी थोड़े खिंच गए, 'मैं भी हैरान हूँ कि मुझे कैसे खयाल आया।'

हाफिज भाई ने अपनी कुर्सी से उठने की कोशिश की। वे उठ नहीं पाए। उन्होंने आवाज लगाई, 'शैडो।'

शैडो ने अंदर आकर उन्हें खड़ा किया। उन्होंने शैडो से पूछा, 'और कोई फरियादी है बाहर?'

'जी नहीं।'

शैडो की मौजूदगी में ही हाफिज ने हमसे कहा, 'कहिए आपकी क्या खिदमत करें। आपको अपना तबादला या तरक्की करवानी है तो कागज दे जाइए। बच्चे का दाखिला हो तो अगली बार मिलना मुनासिब होगा। और भी दो एक केसेज हैं।'

राजेश का मूड पूरी तरह उखड़ चला।

'हमें अफसोस है हम अपने पुराने दोस्त से मिलने चले आए। आप तो कोटा, परमिट, तबादला, तरक्की के दलदल में फँस गए हैं'

'मियाँ देखना पड़ता है, हर तरफ देखना पड़ता है।' हाफिज शैडो की तरफ मुखातिब हुए, 'हम आराम करने जा रहे हैं, कोई आए तो कहना हम घर पर नहीं हैं।'

खिन्न मन से हम बाहर आए। 'बड़े बेआबरू हो कर तेरे कूचे से हम निकले' जैसे शेर की चोट समझ आ गई। पुराने घर के खुदे हुए गड्ढे की तरफ जरा भी न देख कर हम गंदगी से बचते-बचाते चलने लगे।

धर्मशाला के सामने वाले घर से नवाब साहब की आवाज आई, 'हमारे गरीबखाने को भी रोशन करें भाईजान'

हम ठिठक गए। नवाब बड़े इसरार से हमें अंदर ले गए। शरारा कुरती के ऊपर शोख सुर्ख दुपट्टा ओढ़े उनकी बेगम, बाराँ ने हमें आदाब किया और चाय बनाने चली गईं।

नवाब साब ने हमारी नस पर उँगली रख दी, 'एमपी साहब से मुलाकात हो गई?'

राजेश के मुँह से निकाला, 'एमपी होकर क्या इनसान इनसान नहीं रहता! वे तो पहचान में नहीं आए।'

'उनके ऊपर जलजला हो कुछ ऐसा आया। आपको पता है राजेश भाई, उनकी दोनों बेटियाँ घर छोड़ कर चली गईं।'

अब चौंकने की बारी हमारी थी, 'अरे, कब, कैसे, कहाँ?

सुबूही का तो किसी से अफेयर था, 'मेरा इतना बोलना था कि राजेश ने मुझे घुड़का, 'तुम्हें बीच में जरूर बोलना है। नवाब साब, बड़ी हैरानी की बात है, इतने पहरे के बीच से लड़कियाँ चली गईं। हाफिज भाई कह रहे थे वे पढ़ाई

करने मुंबई गई हैं।'

'और क्या कहें। उनकी इज्जत का तकाजा है चुप रहें। उन्होंने पुलिस में रिपोर्ट तक नहीं लिखवाई।'

तभी बाराँ चाय की ट्रे लेकर आ गईं। साथ में वेबे, मिठाई और नमकीन था।

बाराँ ने कहा, 'सना तो संजीदा लगती थी, सुबूही के रंग-ढंग अजीब थे। मैंने तो एक बार तहमीना आपा से कहा भी था पर वे उलटे मुझ पर ही बिगड़ने लगीं।'

'हमारे यहाँ भी उसके फोन आया करते थे', मैंने कहा। 'फोन आने से कोई भाग नहीं जाता', राजेश ने टोका। 'उसकी अलग दास्तान होगी।'

नवाब साब ने कहा, 'देखिए भाईजान जब बाप घर से दूर रहे और माँ बावर्चीखाने में, तो बच्चों के भटकने में देर नहीं लगती। कई बार हमारे घर भी ये लड़कियाँ आतीं। बेगम से कहतीं, 'आप कितनी खुशकिस्मत हैं बिना पर्दे आती-जाती हैं। हमारे ऊपर तो बंदिशें ही बंदिशें हैं।'

'लेकिन बंदिशें उन्होंने मानी कहाँ। सना का तो पता नहीं पर सुबूही - 'जैसे ही मैंने इतना कहा राजेश फिर बमक गए, 'तुम बीच में फतवे क्यों दे रही हो, क्या जानती हो तुम उनके बारे में?'

बाराँ ने कहा, 'आपा तो अपना खयाल बता रही हैं। हम सब हैरान हुए। मुश्किल यह है कि हाफिज भाई इस हादसे की पूरी जिम्मेवारी आंटी पर डाल रहे हैं।'

'एक तरह से बनती तो है। आखिर बेटियाँ उन्हीं के पास रहती थीं।'

'आंटी की तबीयत बड़ी खराब रहती थी। वे बेचारी रात को नींद की गोली लेकर सो जातीं। उन्हें क्या पता बेटियाँ क्या कर रही हैं?'

'क्या हो गया उन्हें?'

'एंग्जायटी न्यूरोसिस,' बाराँ ने बताया, 'उन्हें हर वक्त दो फिक्रें खाए जातीं। पहली यह कि उनके शौहर दूसरी शादी न कर लें, दूसरी यह कि इन लड़कियों की शादी कैसे होगी।'

'इतनी खूबसूरत और जहीन लड़कियों की शादी में क्या दिक्कत थी?'

'आप नहीं जानते, हमारे सैयदों में पढ़े लिखे, नई रोशनी वाले लड़के ढूँढ़ना आसान नहीं, ऊपर से हाफिज भाई की मसरूफियत। भाभी साहब को हर वक्त तनाव रहता।'

'मुंबई कोई इतनी दूर भी नहीं, वहाँ जाकर पता किया जा सकता है'।

सब किया राजेश भाई पर कोई सुराग नहीं मिला फिर मुंबई तो लड़कियों के मामले में मगरमच्छ है।'

बाराँ ने धीरे से कहा, 'यह भी पक्का नहीं पता कि सन्ना और सुबूही मुंबई गईं या कहीं और?'

बड़े भारी मन से हम वहाँ से वापस आए। मेरे मन में रह-रहकर यही सवाल टक्कर मारता रहा, हाफिज भाई अपने को क्या समझते होंगे, कामयाब या गैर-कामयाब इनसान!

शीर्ष पर जाएँ

डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

थोड़ा-सा प्रगतिशील

ममता कालिया

विनीत ने अपनी सहपाठी चेतना दीक्षित के साथ दोस्ती, मुहब्बत और विवाह की सीढ़ियाँ दो साल में कुछ इस तरह चढ़ लीं कि एक दिन चेतना उसके घर हमेशा के लिए आ बसी। अपनी सफलता पर अभिभूत हो गया विनीत। साथ ही सावधान। प्रेम का प्रथम ज्वार जरा धीमा पड़ा तो उसे सबसे पहले यह चिन्ता हुई कि जिस आसानी से उसने चेतना को पटा लिया उतनी ही आसानी से कोई और न उसे पटा ले। साल भर में चेतना की कमनीयता में कोई कमी नहीं आई, उलटे उसमें इजाफा ही हुआ था। शोखी अब बातों के साथ-साथ उसकी आँखों में भी उतर आई थी।

दरअसल विनीत आजाद भारत के अधिसंख्य शिक्षित नवयुवकों जैसा ही था, थोड़ा-थोड़ा सब कुछ -- थोड़ा-सा आधुनिक, थोड़ा-सा, पारम्परिक, थोड़ा-सा प्रतिभावान, थोड़ा-सा कुंद, थोड़ा-सा चैतन्य, थोड़ा-सा जड़, थोड़ा-सा प्रगतिशील, थोड़ा-सा पतनशील। सभी की तरह उसके सपनों की स्त्री वही हो सकती थी जो शिक्षित हो पर दब कर रहे, आधुनिक हो, लेकिन आज्ञाकारी, समझदार हो लेकिन अलग सोच-विचार वाली न हो।

विनीत देखता चेतना अपना पूरा दिन किसी न किसी बात या काम में मगन रह कर बिताती। ऐसा लगता जीवन की कोई सुरताल उसके हाथ लग गई है और वह एक लम्बी नृत्यमुद्रा में लीन है। विनीत ने सोचा उसे तौल लेना चाहिए चेतना के दिमाग में क्या चल रहा है।

उसने बात कुछ इस तरह शुरू की, 'चेतू, तुम्हारे सिवा और किसी से बात करना मुझे बिल्कुल अच्छा नहीं लगता।' उसके कान यह सुनने का इंतजार कर रहे थे कि चेतना कहेगी उसे भी विनीत के सिवा किसी और लड़के से बोलना गवारा नहीं।

चेतना ने कहा, 'यह तो गंभीर समस्या है। कल को मेरे दोस्त घर आयेंगे तो तुम क्या करोगे?'

'मैं दूसरे कमरे में चला जाया करूँगा,' उसने जल-भुन कर जवाब दिया। 'देखो, मुझे तो सबसे बोलना अच्छा लगता है, बच्चों से, बड़ों से यहाँ तक कि मैं किताबों और टी.वी. से भी बोल लेती हूँ।'

'चेतना, दुनिया इस बीच बहुत खराब हो चली है। जब भी तुम किसी से बात करो, एक फासले से बोला करो। लोग लड़कियों के खुलेपन का गलत मतलब निकालते हैं।

'निकालने दो, यह उनकी समस्या है, मेरी नहीं।' चेतना ने कंधे उचका दिये।

मकान में नीचे के कमरे खाली पड़े थे। दरअसल यह विनीत के बाबा का बनाया हुआ मकान था। इसमें उन्होंने निचली मंजिल पर आँगन की बाहरी तरफ चार कमरे इसलिये बनवाये थे कि उन्हें दुकानों के लिए किराये पर उठा दिया जाए। बाबा तो रहे नहीं, उनके नीति-नियम भी उनके साथ ही विदा हुए। विनीत के माता-पिता यहाँ रहते नहीं थे। उनकी नियुक्ति इन दिनों जम्मू में थी। विनीत को यह पसंद नहीं था कि घर का कोई भी हिस्सा किराये पर चढ़ाया जाए। वे चारों कमरे खाली पड़े थे। महीने में एक बार सफाई करवाने के लिए इनका ताला खोला जाता। घर की नौकरानी बड़बड़ाते हुए कमरों में झाड़ू लगाती। चेतना फौरन उसे पाँच का नोट पकड़ा देती।

इस साल दिसम्बर में ठंड इतनी बढ़ी कि आकाश से सूरज और धरती से धूप उड़नछू हो गये। लोगों ने अपने कुल जमा गरम कपड़े पहन लिये। लेकिन हर वक्त यही लगता जैसे हर अंग बर्फ में लिपटा हुआ है। ऐसी एक ठंडी शाम कॉफी हाउस से लौटते हुए विनीत और चेतना की नजर अपने रिक्शे वाले पर पड़ी। उसने एक सूती चादर ओढ़ रखी थी, लेकिन रिक्शा चलाने से वह बार-बार उड़ रही थी। चादर के नीचे कमीज भी सूती थी।

वे द्रवित हुए। विनीत ने कहा, 'घर में इतने पुराने गरम कपड़े पड़े हैं, इसे दो-एक कपड़े दे दें।‘

चेतना बोली, 'नीचे के कमरे में बड़े ट्रंक में होंगे।' घर पहुंचकर चेतना ने रिक्शे वाले से कहा, 'रुको तुम्हें स्वेटर देते हैं।'

वह ऊपर से कमरे और बड़े ट्रंक की चाबियाँ लाई। ट्रंक में वाकई बाबा आदम जमाने के रजाई-गद्दे और पुराने कपड़े भरे थे। उसने अच्छी हालत वाला एक गरम कुरता और ऊनी चादर निकाल कर रिक्शे वाले को दी।

रिक्शे वाला उनसे घर पहुंचाने का किराया नहीं लेना चाहता था। वह बार-बार हाथ जोड़ता, 'नहीं मालिक आपने कई दिनों की मजदूरी दे दी।' पर विनीत और चेतना ने जोर देकर उसे पैसे दिये।

रात को नीचे का मुख्य द्वार बन्द करते हुए चेतना ने देखा - रिक्शे वाला कहीं गया नहीं, वह वहीं उनके घर के आगे रिक्शे में ऊनी चादर ओढ़कर गुड़ीमुड़ी हुआ पड़ा था।

उसने विनीत को बताया। विनीत चिन्तित हो गया, 'यह बर्फानी रात में अकड़कर मर जाएगा, देख लेना।'

चेतना ने सुझाया, 'विनीत, क्यों न इसे नीचे के कमरे में रात काटने दें। सब के सब खाली तो पड़े हैं।'

विनीत ने नीचे जाकर रिक्शे वाले को उठाया और कमरा दिखा दिया।

शरण का आश्वासन मिलने पर रिक्शे वाले ने हाथ जोड़ कर विनीत के आगे झुक कर धन्यवाद किया। फिर उसने हाथ ऊपर उठाकर परवरदिगार का भी शुक्र अदा किया। विनीत ने उसका नाम पूछा। उसने बताया, 'रहमत'

यह सब सिर्फ एक रात का इन्तजाम था जो सारी सर्दियाँ जारी रहा।

इतनी ठण्ड में उससे यह कहना कि 'जाओ अपना रास्ता नापो' बड़ा कठिन था, खासकर तब जब रहमत सुबह उठ कर चारों कमरों के साथ आँगन, ड्योढी की भी झाड़ू लगा देता, पौधों में पानी डालता और बड़ी खुशी-खुशी विनीत को दफ्तर छोड़ आता। कभी-कभी चेतना भी उसके रिक्शे में बाजार चली जाती।

एक रात बहुत ज्यादा ठण्ड पड़ी। पहाड़ी कस्बों में बर्फ गिरी तो मैदानी कस्बे भी जमने लगे। चेतना को लगा रहमत को ठण्ड लग रही होगी। उसने अपने कमरे की खिड़की से आवाज लगाई, 'रहमत तुम्हें ठण्ड तो नहीं लग रही?'

रहमत ने जवाब दिया, 'नहीं मालकिन।'

विनीत की नींद टूट गई। उसने चिढ़ कर चेतना की तरफ देखा, 'यह बात दिन में भी पूछी जा सकती थी।'

'दिन में तो धूप की रजाई होती है। पाला तो रात में ही पड़ता है।'

'अगर उसे ठण्ड लग भी रही है तो क्या करोगी? क्या अपनी रजाई उसे दे दोगी?

'तुम तो बात का बतंगड़ बना देते हो। वह ऐसा कहेगा ही नहीं।'

विनीत बड़बड़ाया, 'मेरी अच्छी-भली नींद चौपट कर दी।'

दफ्तर की तरफ से स्कूटर खरीदने के लिए विनीत ने छह महीने से अर्जी लगा रखी थी। इसमें यह सुविधा थी कि सरकारी कर्मचारियों को निर्धारित मूल्य पर दस प्रतिशत की रियायत मिल जाती और माँगने पर प्राविधि खाते से पैसे निकालने की अनुमति भी।

जिस दिन स्कूटर आवंटन की खबर आई, विनीत खुश हुआ। उसने शाम को घर पहुँच कर चेतना को बताया। चेतना के मुँह से तत्काल निकला, 'बेचारे रहमत का क्या होगा?'

'इसका क्या मतलब? हमने क्या उसका ठेका ले रखा है, जाये वह जहाँ से आया था।' विनीत झँझला गया।

'यकायक वह कहाँ सिर छुपायेगा? छह महीने से यहाँ टिका हुआ है।'

'स्कूटर आने के बाद हम रिक्शे वाले का क्या करेंगे। हमने कोई सरकारी रैनबसेरा तो खोला नहीं है।'

'इंसानियत की कोई चीज़ होती है।' चेतना बोले बिना नहीं रही।

'तुम उसकी इतनी फिक्र क्यों कर रही हो? तुम्हारा वह क्या लगता है? मैंने सोचा था तुम स्कूटर की खबर से खुश होगी।'

'खुश तो मैं हूँ पर एक गरीब का आसरा छिनेगा यह बात खराब है।'

'तो क्या करें। क्या हम एन.जी.ओ. खोल कर बैठ जायें और अपने इलाके के सारे भूखे, नंगों को शरण दें।'

'इसके लिए बड़ा कलेजा चाहिए, हम तो एक अदद बेघर के सिर पर छत नहीं दे पा रहे जबकि वह अपने पैरों पर खड़ा है।'

विनीत बहुत चिढ़ गया। उसने मन ही मन तय किया, आने दो आज रहमत को। उसे ऐसी झाड़ पिलाऊँगा कि खुद ही अपना बोरिया-बिस्तरा उठा कर भाग जायेगा।

यह चिढ़ केवल रिक्शे वाले तक सीमित न थी। छोटी-छोटी बातों में विनीत को ढेर-सा गुस्सा उमड़ता।

कई बार वह अपने दफ्तर के दोस्तों को घर लाता। वे तय करते, विनीत के घर बैठकर बियर-वियर पी कर थोड़ा रिलैक्स हुआ जाए। बाकी साथियों के घर में एकांत का अभाव था। किसी के यहाँ माँ-बाप की मौजूदगी तो किसी के घर में बच्चों की चिल्ल-पौं आराम का माहौल न बनने देती। विनीत का घर इस मामले में निरापद था।

इस तरह के कार्यक्रम के लिए सब खुशी से खर्च में हिस्सा बाँटते। चेतना नमकीन और सलाद का इंतजाम कर देती। लेकिन नमकीन की प्लेटें रखने के साथ-साथ वह खुद भी आ बैठती। विनीत किसी न किसी बहाने उसे उठाता रहता, 'नमक लाओ, नींबू लाओ, बर्फ लाओ।' वह फौरन सामान लाकर पुन: बैठ जाती। किसी तरह अपने गुस्से पर जब्त कर, विनीत रात में चेतना को समझाने की कोशिश करता, 'देखो चेतू, तुम मेरे दफ्तर के लोगों के सामने न बैठा करो, ये अच्छे लोग नहीं हैं।'

'मुझे तो उनमें कोई खराबी नहीं दिखती। कितनी इज्जत से बात करते हैं।' चेतना असहमत होती।

'यह सब दिखावा है। दफ्तर में ये लोग दूसरों की बीवियों पर भद्दे-भद्दे कमेन्ट करते हैं।

'अगर ये इतने खराब लोग हैं तो तुम्हें भी इनसे दूर रहना चाहिए।'

'मुझे उपदेश देने की जरूरत नहीं। मेरा कर्तव्य है कि तुम्हारी रक्षा करूँ।' विनीत ने बात समाप्त की।

विनीत ने पाया बाजार में कितनी ऐसी दुकानें थीं जिनके दुकानदार चेतना से हँसकर बात करते। उसके कहने पर दो-चार रुपये की छूट भी दे देते। कुछ विक्रेता तो उसकी पसंद ऐसे समझते कि उसके बोलने से पहले उसकी मर्जी का सामान निकालकर काउंटर पर रख देते।

विनीत ने एक दिन कहा, 'चेतू, तुम क्यों बाजार जाकर परेशान होती हो। ऑफिस से वापस आते हुए मैं ही ला दूँगा जो लाना हो। तुम सुबह लिस्ट बना कर मेरी जेब में रख दिया करो।'

अपने प्रेमी पति को तकलीफ नहीं देना चाहती थी चेतना लेकिन उसे अपनी आजादी भी प्रिय थी। अब वह बिना विनीत को बताये दोपहर में बाजार के लिए निकल पड़ती। कई बार बिना कुछ लिये लौट आती पर बाहर निकलने का सुख अपनी जगह था। दुकानों में सजे सामानों का वह पत्र-पत्रिकाओं में दिये गये सामानों से मिलान करती और मन ही मन तय करती कौन-सी जगह पिछड़ी है तो कौन-सी अधुनातन।

घर में आने वाले अखबार और पत्रिकाओं की संख्या मजे की थी, क्योंकि दोनों पढ़ने के शौकीन थे। विनीत जहाँ हर पत्रिका एक बार पलट कर सरसरी तौर पर पढ़ता, चेतना उसे आद्योपांत पढ़ती। उनमें प्रकाशित लेख, कहानी, कविता पर विचार करती और अपनी सहेलियों से या विनीत से उन पर चर्चा करती। विनीत कहता, 'देखो रचनाओं में तर्क से ज्यादा तन्मयता देखी जाती है।'

चेतना कहती, 'तर्क के बिना जीवन में कुछ भी स्वीकार नहीं किया जा सकता, साहित्य भी नहीं। सहेलियाँ समझातीं, 'तुम क्यों सारा दिन माथापच्ची करती हो। कहानियों में झूठ ही झूठ होता है।

चेतना अपनी सहमति और असहमति व्यक्त करने में जरा देर न लगाती।

वह सम्पादकों को लम्बे-लम्बे पत्र लिखती। जिन रचनाओं में लेखकों के फोन नम्बर या पते दिये होते, वह उनसे भी सम्पर्क करने की कोशिश करती।

ज्यादातर तो किसी का उत्तर नहीं आता, लेकिन हाँ, एक बार एक कहानी लेखक ने उसे जवाब दिया था। उसने बड़ी सादगी से चेतना के तर्क मान लिये और कहा, 'जहाँ तक मेरी बुद्धि की पहुँच थी मैंने कहानी लिखी। आप मुझसे ज्यादा प्रखर हैं।'

पति-पत्नी दोनों ने यह पत्र पढ़ा। दोनों की प्रतिक्रिया अलग थी।

विनीत ने कहा, 'कितना बड़ा लेखक है और कितना विनम्र। उसने तुम्हारे आगे हथियार डाल दिये।'

चेतना बोली, 'गलत। विनीत, यह लेखक बड़ा चालाक है। उसने ऐसा लिख कर अपना पीछा छुड़ाया है।'

'चलो छोड़ो, तुम्हें भी क्या पड़ी जो तुम लोगों को चिट्ठी लिखती फिरो या फोन करो। कहानियाँ पढ़ कर भूल जाने के लिए होती हैं।'

चेतना ने पाया इधर रोज रात विनीत उसका फोन उलट-पुलट करता है। ध्यान देने पर उसे समझ आया कि वह यह देखता है कि पत्नी के पास किसका फोन आया और उसने किसको किया।

'कितनी ओछी हरकत है। मैं तो इससे दफ्तर के हर मिनट का हिसाब नहीं लेती।' उसे महसूस हुआ।

चेतना का मन कुछ बुझ गया। उसे लगा जैसे उसके ऊपर एक अनदेखा कैमरा लगा हुआ है।

उसने किताबों के बजाय कम्प्यूटर में मन लगाना शुरू किया। यह क्या! चेतना को जैसे घर बैठे नयी निराली दुनिया मिल गई। हर विषय पर इतनी जानकारी और इतनी विविधता। सत्य और तथ्य जानने की उसकी उत्कंठा अब कहीं संतुष्ट होने लगी। विनीत हैरान रह गया। वह जैसे ही कोई बात कहता, चेतना उसके दस पहलू सामने रख देती। विनीत ने उसे नया नाम दे दिया, मिनीपीडिया।

चेतना की प्रखरता से विनीत प्रभावित भी था और प्रताड़ित भी। उसे लगता जिंदगी की दौड़ में चेतना उसे बहुत पीछे छोड़ सकती है।

फेसबुक पर चेतना के हजारों दोस्त बन गये। वह अब घर ही घर में एकदम मगन रहती। वह रात में जाग कर इंटरनेट पर कुछ न कुछ पढ़ती रहती। आजकल विनीत कुढ़ रहा है और मना रहा है कि कहीं चेतना नौकरी करने का इरादा न कर ले। लगता है वहाँ भी वह उसे पछाड़ गिरायेगी।

शीर्ष पर जाएँ

डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

निर्मोही

ममता कालिया

बाबा की पुरानी कोठी। लम्बे-लम्बे किवाड़ों वाला फाटक, जहाँ पहुँच रेल की पटरी ट्राम की पटरी जैसी चौड़ी हो जाती। जब बन्द होता, ताँगों की कतार लग जाती कोठी के सामने। रेल क्रॉसिंग के पार झाड़-बिरिख और कुछ दूर पर सौंताल। कभी इसका नाम शिवताल रहा होगा पर सब उसे अब सौंताल कहते। उसके पार जंगम जंगल। बीच-बीच से जर्जर टूटी दीवारें। कहते हैं वहाँ राजा सूरसेन की कोठी थी कभी। घर की छत पर मोरों की आवाज़ उठतीं- 'मेहाओ मेहाओ।' जब तक हम दौड़-दौड़े छत पर पहुँचे मोर उड़ जाते। लम्बी उड़ान नहीं भरते। बस सौंताल के पास कभी कदम्ब पर या कटहल पर बैठ जाते। सौंताल से हमारी छुट्टियों का गाथा-लोक बँधा हुआ था। शाम को ठंडी बयार चलती। दादी हाथ का पंखा रोक कर कहतीं, "जे देखो सौंताल से आया सीत समीरन।" कभी आकाश में बड़ी देर से टिका एक बादल थोड़ी देर के लिए बरस जाता। दादी का आह्लाद देखने वाला होता, "आज सिदौसी से मोर-पपीहा मल्हार गा रहे थे। मैं जानू मेह परेगौ।"
दादी दिन-रात सौंताल की रागिनी से बँधी रहतीं। बाज़ार में पहली-पहली कटहरी आई, हरी कच्च। दादी कुँजड़िन से पूछें, "सौंताल की है न।"
कुँजड़िन को गहकी करनी है, सत्त कमाने नहीं निकली है।
"हम्बै मैया।"
"और जे कचनार, जे लाली सेम? सब सौंताल की है न!"
"हम्बे मैया। सारा झउआ उँहई भरायौ ए।"

दादी तरकारी लेकर आँगन में बैठ जातीं तख्त पर। एक-एक तरकारी छाँटतीं-छीलतीं। उनकी पोथी का एक-एक पन्ना खुलता जाता।
'जे कचनार राजा जी ने लगवायौ हौ। उनकी रसोई में एक दिन पूरी ब्यालू कचनार की रँधे ही। कचनार की भुजिया, कचनार का रायता, कचनार का अचार, बाजरे की बेड़मी। एक दिन शकरकन्दी का राज रहतौ। शकरकन्दी का हलवा, शकरकन्दी की खीर, शकरकन्दी की चाट, शकरकन्दी की पूड़ियाँ।"

दादी की निगाह में यह राजा जी की वैभवगाथा थी पर हम तीनों बहन इस विवरण से ज़रा भी प्रभावित न होतीं।
"बड़ा इकरंगा जीवन था राजाजी का। उनकी रानी तो ऊब से अधमुई हो जाती होगी।" हम कहते।
"जे लो छोरियों, तुम्हें सुख में दुख दिखे, दुख में सुख दिखे। कौन चाल मेल की हो तुम?"
रात को हम छत पर छिड़काव करतीं। एक-एक कर सबके बिस्तर बिछातीं। एक ऊँची पटिया पर सुराही रखतीं, सुराही पर गिलास मूँदा मारतीं। भग्गो बुआ काले उदले में आलू की रसेदार तरकारी लाकर रखती। दादी कठौते में

परांठे। मैं कचनार के रायते पर भुना हुआ पिसा जीरा छिड़कती। कटोरियाँ गिनती, एक दो तीन चार पाँच छः सात आठ। धत्त तेरे की। कटोरी थाली तो बस छः ले जानी है। मम्मी पापा तो आए नहीं हैं। तभी तो रोज़ खाट पर पड़ जाने के बाद दादी जागती रहतीं। जब फ्रंटियर मेल का इंजन अपनी भट्टा जैसी एक आँख चमकाता, चिंघाड़ता गुज़र जाता, उसके दो तीन मिनट बाद दादी जम्हाई लेतीं, "सो जा री छोरी! लगै आज भी बिद्दाभूसण नायं आयौ।"

बाबा अपनी खाट से कहते, "ससुरे में छटाक भर भी ममता नहीं है माई बाप की। दिल्लीवारौ बनौ बैठो ए।"
दादी बमक पड़तीं, "जे बताओ, तुमने कभी नेक ममता करी लड़कन की। कान खींचे, गेटुआ दबाये, कभी तराजू दे मारें, कभी बाँट फेंके। कौन करम नायं किए। मेरे दोनों लालाए देस निकारा दे डारौ।"
बाबा आग बबूला हो जाते, "बिरचो समझै नायं। तेरे छोरन पे बाबूसाहबी छाई रही। पैंट बुशकोट पहरें, गिटपिट बोलें, कुर्सी तोड़े। गद्दी पे बैठ बूरा तोलने में उनकी मैया मरै थी। एक कबिताई करे लगौ, दूसरे को साहबियत चाट गई।"
दादी बिखरा दूध समेटतीं, "अच्छा अच्छा बस करौ। तुम तो बर्र के छत्ते से छिड़ परौ हौ। नतनियाँ सुनेंगी, सरम करौ।"
जब बेटे सगे नायँ निकरै तो नाती धेवते कौन किरिया करेंगे। कोऊ काम नायँ आयेगौ, समझी रहौ।"
बाबा तो पड़ी लगाकर सो जाते, दादी रात भर घुट-घुट कर उमड़तीं-घुमड़तीं। "जेईमारे निकर गए दौऊ भइया। न कभी उन्हें दुलराया न पुचकारा। बस दुर-दुर करते रहे। ज़िन्दगी भर हर चीज़ बाँट तराजू से तोली। मैं कहूँ अजी प्यार को मोल और तोल बतावै, ऐसी तराग कहाँ पाओगे। पर नायं, जे तो छोटे के काग़ज़ पत्तर कापी उठा-उठा के चूल्हे में झोंके। बड़े की किताबें रद्दीवाले को बेच आए। दो दिन रोटी नहीं खाई मेरे लालों ने।"

मैं दादी के पैर दबाती। उन्हें थपकती कि किसी तरह वे सो जायें। सुबह सौंताल की तरफ़ दादी के साथ जाती हुई कहती, "दादी इस बार तुम हमारे साथ दिल्ली चलो।"
दादी निहाल हो जातीं। मुझे कमर से चिपका कर, मेरे बिखरे बालों पर हाथ फेरतीं "बिल्कुल बाप पे गयौ है मेरो लूटरबाबा। मैं जानूँ बिद्दाभूसण भी मुझे हुड़कता होगौ। जब बारहवीं में आगरे पढ़ै था, रात में मेरी पाटी पर आकर पूछै, "जीजी च्यौं रो रई हो?" मैं चुप।
"कान में दरद है?" मैं चुप। "दाँत में दरद है?" मैं चुप की चुप।
"पैर दबा दूँ?" नई।
"जीजी सुबह तुम्हें डाक्टर के लै चलूँगौ, चुप हो जाओ।"
तभी तेरे बाबा अपने तखत पे से किल्ला उठें, "याके लिये तेरे पास डागडर की फीस है तो मेरे को दे दीजौ। कातिक में आढ़त भरनी है काम आएगी।" बिद्दाभूसण में ऐसी खटास भर जाती अगले ही रोज़ वह अपना बिस्तरा गोल कर लेतौ।"
हमें बाबा से डर लगने लगता। शाम की सैर के बाद घर लौटने में दहशत होती। हम कहतीं, "दादी आज यहीं रह जायं, घर ना जायं।"

दादी कहतीं, "घर तो जानौ ही परैगो। अपने द्वारे से हट के तो फूलमती भी नायँ जी, हम तुम कौन गिनत में।"
अन्नो कहती, "देखो ये अर्जुन और कदम के नीचे कैसी पत्तों की छैयाँ है, पीने को बावड़ी का मीठा पानी और खाने को झरबेरी के लाल लाल बेर।"
दादी तड़प जातीं, "ऐ री अन्नो! अब की तो कह दिया, फिर कभी न कहियो जे बात।"

"क्यों दादी" मैं ज़िद करती।
"तुझे नायं पतौ! बहू ने नायं सुनायौ वा किस्सौ ?"
हम वापसी के लिए चल पड़ते। दादी अपनी एक टाँग पर उचक उचक कर चलतीं। और किस्सा भी उचक-उचक कर आगे बढ़ता।

"एक थी फूलमती। बाके ये बड़ी बड़ी आँखें, कोई कहे मिरगनैनी कोई कहै डाबरनैनी। एक बाकी ननद लब्बावती। जेई सौंताल से लगी हवेली राजा सूरसेन की। राजा जी के सन्तरी मन्तरी ने भतेरा समझायो, "या बावड़ी ठीक नईं, नेक परे नींव धरो" पर राजा जी अड़े सो अड़े रहे "मैं तो यई बनवाऊँगौ महल। एम्मे का बुरौ है।"
"राजा जी पीपल के पेड़ पर भूत पिसाच और परेत तीनों का बसेरौ ए। जैसे भी भीत उठवाओगे, पीपल की छैयाँ ज़रूर छू जाएगी, जनै उगती जनै डूबती।" सन्तरी बोले।
बस इत्ती-सी बात।
ये लो। राजाओं ने पीपल समूल उखड़वा दियौ।

राजा सूरसेन को अपनी रानी से बड़ी परेम हौ। रानी फूलमती बोली, "राजा ऐसौ बाग बनाओ कि मैं पूरब करवट लूँ तो मौलसिरी महके, पच्छिम घूम जाऊं तो बेला चमेली।" राजा ने ऐसौ ही कर्यौ। हैरानी देखो बेलों की जड़ सौंताल की मिट्टी में और फूल खिलें रानी के चौबारे।
राजकुमारी लब्बावती का विवाह हाथरस के कुँअर वृषभानलला के पोते से हो गया। अभी गौना नहीं हुआ था। नन्द भाभी घर में जोड़े से डोलें, सास बलैयाँ लेती, "मेरी बहू बेटी दोनों सुमतिया।"
"पर तुम जानो जहाँ सौ सुख हों, वहाँ एक दुख आके कोने में दुबक कर बैठ जाय तो सारे सुख नास हो जायं। सोई हुआ राजा की हवेली में।"
"कैसे?" अन्नो ने कहा।
"अरे विवाह को एक साल बीता, दो साल बीते, साल पे साल बीते, फूलमती की कोख हरी न भई।
"सास लाख झाड़-फूँक करावै, राजाजी ओझा-बैद बुलावें, नन्द किशन कन्हाई की बाललीला सुनावौ पर कोई उपाय नायं फलै।"

"एक दिन लब्बावती को सुपनौ आयौ कि तेरे भैया ने पीपर समूल उपारौ, येई मारे महल अटारी निचाट परै हैं। एकास्सी के दिन सौंताल के किनारे फिर से तैरी भाभी पीपर लगायं,रोज़ ताल में नहायं, पीपर पूजै अन जल लें तब जाके जे कलंक मिटै। फिर तू नौ महीनन में जौले जौले दो भतीजे खिलइयौ।"
लब्बावती ने सुबह सबको सपना बखानौ। अगले ही दिन एकास्सी थी। सो सात सुहागनें पूजा की थाली सजाए, सोलहों सिंगार किये, सोने का कूजा डाबरनैनी फूलमती के सिर पर धरा कर पीपल रोपने चलीं। महल की मालिन का इकलौता बेटा सबके आगे आगे रास्ता सुझाये। बाके हाथ में फड़वा खुरपी।
राजा महलन में से देकते रहे। रानी फूलमती ने लोट-लोट कर पूजा की। आपै। आप बावड़ी में उतर सोने की कुजा भरयौ और पपर-मूर पे जल चढ़ायौ। फिर सातों सुहागनों ने असीसें उचारीं। सब की सब राजी खुशी घर लौटीं।
रोज़ सबेरे पंछी-पंखेरू के जगते-मुसकते फूलमती, लब्बावती दोनों जाग जातीं और सौंताल नहाने, पीपर पूजने निकल पड़तीं। कभी राजा जी जाग जाते, कभी करवट बदल कर सो जाते।

फूलमती भायली ननद से कहती, "तेरे भइया तो पलिका से लगते ही सोय जायं। इनकी ऐसी नींद तो न कभी देखी न सुनीं।"
लब्बावती कहतीं, "मेरे भइया की नींद को नज़र न लगा भाभी। जे भी तो सोच जित्ती देर जागेंगे तुम्हें भी जगाएँगे कि नायं।"
डाबरनैनी फूलमती उलटी साँस भरती, "हम तो सारी रात जगें, भला हमें जगाबे बारो कौन ?"
लब्बावती को काटो तो खून नहीं। बोली, "क्या बात है?"
फूलमती बोली, "अभी तुम गौनियाई नायं, तुम्हें का बतायं का सुनायं। तोरे भैया तो जाने कौन-सी पाटी पढ़े हैं कि मन लेहु पे देहु छटांक नहीं।" फिर फूलमती ने बात पलटी, "तुम्हारी ससुराल से संदेसो आया है अबकी पूरनमासी को लिवाने आयेंगे।"
लब्बावती ने भाभी की गटई से झूल कर लाड़ लड़ाया, "कह दो बिन से, पहले हम अपने भतीजे की काजल लगाई का नैग तो ले लें तब गौना जायं।"

माँ ने सुना तो बरज दिया, "समधी जमाई राजी रहें। इस बारगौनाकर दें, फिर तू सौ बार अइयौ, सौ बार जइयो, घर दुआर तेरौ।" बड़े सरंजाम से लब्बावती कि बिदाई भई। गौने में माँ और भैया ने इत्तौ दियौ कि समधी की दस गाड़ी और राजा जी की दस गाड़ी ठसाठस भर गईं। डोली में बैठते लब्बावती ने भाभी को घपची में भर लीनो "भाभी मेरी, मेरे भैया को पत रखना पीपल पूजा, वावड़ी नहान का नेम निभाना। मोय जल्दी बुलौआ भेजना।"
फूलमती ननद के जाने से उदास भई। राजाजी ने कठपुतली का तमाशा करायौ, नन्द-गाँव का मेला दिखायौ पर रानी का जी भारी सो भारी।

सुबह-सबेरे अभी भी वह रोज सौंताल नहाये, पीपल पूजे तब जाकर अनजल छुए। अब इस काम में संगी साथी कोई न रह्यौ। एक दिन रानी भोर होते उठी। एक हाथ पे धोती जम्पर धर्यौ दूसरे पे पूजा की थाली और चल दी नहाने।
उस दिन गर्मी कछू ज़्यादा रही कि फूलमती की अगिन। गले गले पानी में फूलमती खूब नहाई। अबेरी होते देख फूलमती पानी से निकरी। अभी वह कपड़े बदल ही रही थी कि बाकी नज़र झरबेरी पे परी। गर्म में झरबेरी लाल लाल बेरों से वौरानी रही।"
इत्ते में घर आ गया। अन्नो बोली, "दादी तुम्हारी कहानी बहुत लम्बी होती है।"
दादी अपनी छोटी टाँग पर हाथ फेरते हुए बोलीं, "जे कहानी नहीं जिनगानी है लाली! देर तो लगैगी ही।"
दादी घर पहुँच कर काम-काज में लग गईं। मुझे लगता रहा लो डाबरनैनी को दादी ने सौंताल पर गीला नंगा छोड़ दिया, जाने वह कब घर पहुँची। पर दादी को कहाँ वक्त। कभी बटलोई चूल्हे पर धरें, कभी उतारें। कभी रोटी तवे पर कभी थाली में। हम तीनों उनकी भरसक मदद करतीं पर चौके में दादी के बिना कुछ होय ही ना।
दिन में दो बार मैंने और अन्नो ने याद दिलाई, "दादी कहानी?"

दादी ने बरज दिया, "ना दिन में ना सुनी जाती कहानी, मामा गैल भूल जायेगौ।" मैं चुप। मेरे चार मामा थे और अन्नो-शन्नो के तीन। सात लोग रास्ता भूल जायें, यह कैसे हो सकता है।
रात की ब्यालू निपटते ही हम दादी को घेर कर बैठ गए। अन्नो उनकी टाँगे दबाने लगी। मैंने सिर दबाना शुरू किया। "दादी फिर क्या हुआ?"
"अज्जे राम रे, मैं तो बहौत थक गई। देखो, हुंकारा भरती रहना। कहीं भटक-भूल जाऊँ तो टोक देना नहीं फूलमती

को न्याव नायं मिलगौ।"
"हाँ तो फिर क्या था। फूलमती ने न आगा सोचा न पीछा, बस बेर तोड़ने ठाड़ी हो गई उचक-उचक कर बेर तोड़े और पल्ले में डारौ। वहीं थोड़ी दूर पर मालिन का लड़का पूजा के लिए फूल तोड़ रहौ थौ। तभी रानी की उंगरी मा बेरी का काँटा चुभ गयौ। फूलमती तो फूलमती ही, बाने काँटा कब देखो। उंगरी में ऐसी पीर भई कि आहें भरती वह दोहरी हो गई। मालिन के छोरे कन्हाई ने रानी जी की आह सुनी तो दौड़ा आयौ।

काँटा झाड़ी से टूट कर उंगरी की पोर में धँस गयौ। मालिन का छोरा काँटे से काँटा निकारनौ जानतौ रहौ। सो बाने झरबेरी से एक और काँटा तोड़ रानी की उंगरी कुरेद काँटा काढ़ दियौ। काँटे के कढ़ते ही लौहू की एक बूँद पोर पे छलछलाई। कन्हाई ने झट से झुक कर रानी की उंगरी अपने मुँह में दाब ली और चूस चूस कर उनकी सारी पीर पी गयौ। छोरे की जीभ का भभकारा ऐसा कि रानी पसीने पसीने हो गई।

उधर राजा सूरसेन की आँख वा दिना जल्दी खुल गई। सेज पे हाथ बढ़ाया तो सेज खाली। थोड़ी देर राजा जी अलसाते, अंगड़ाई लेते लेटे रहे। उन्हें लगा आज रानी को नहाने पूजने में बड़ी अबेर है रही है। राजा जी ने वातायन खोला। सौंताल में न रानी न वाकी छाया। पीपल पे पूजा अर्चन का कोई निशान नहीं। रानी गईं तो कहाँ गई। सूरसेन अल्ली पार देखें, पल्ली का छोरा कन्हाई दिखे। फूलमती की उंगरी कन्हाई के मुँह में परी ही और रानी फूलों की डाली-सी लचकती वाके ऊपर झुकी खड़ी।

राजा सूरसेन को काटो तो खून नहीं। थोड़ी देर में सुध-बुध लौटी तो मार गुस्से के अपनी तलवार उठाई। पर जे का तलवार मियान में परे परे इत्ती जंग खा गई कि बामें ते निकरेंई नायं। राजा ने पोर मालिन के छोरे के मुँह में परी सो परी।
राजा, परजा की तरह अपनी रानी को घसीट कर महलन में लावै तो कैसे लावै, बस खड़ा-खड़ा किल्लावै। उसने अपने सारे ताबेदारों को फरमान सुनायौ कि महल के सारे दुआर मूँद लो,रानी घुसने न पाय। कोई उदूली करै तो सिर कटाय।
रानी फूलमती नित्त की भाँति खम्म खम्म जीना चढ़ के रनिवास तक आई। जे का। बारह हाथ ऊँचा किवार अन्दर से बन्द। अर्गला चढ़ी भई। रानी दूसरे किवार पर गई। वह भी बन्द। इस तरह डाबरनैनी ने एक-एक कर सातों किवार खड़काये पर वहाँ कोई हो तो बोले।
सूरसेन की माता ने पूछा, "क्यों लाला आज बहू पे रिसाने च्यों हो?"
सूरसेन मुँह फेर कर बोले, "माँ तुम्हारी बहू कुलच्छनी निकरी। अब या अटा पे मैं रहूँगो या वो।"
माँ ने माली से पूछा, मालिन से पूछा, महाराज से पूछा, महाराजिन से पूछा, चौकीदार से पूछा, चोबदार से पूछा। सबका बस एकैई जवाब राजा जी का हुकुम मिला है जो दरवज्जा खोले सो सिर कटाय।
सात दिना रानी फूलमती अपनी सिर सातों दरब्बजों पे पटकती रही। माथा फूट कर खून खच्चर हो गयौ। सूरसेन नायं पसीजौ..."

अन्नो ने भड़क कर कहा, "ये क्या दादी, तुम्हारी कहानी में औरत हमेशा हारती है, ऐसे थोड़ी होती है कहानी।"
दादी ने कहा, "अरे जे कहानी हम तुम नईं बना रहे, जे तो सुनी भई सच्ची कहानी है।"
मैंने कहा, "आगे की कहानी मैं बोलूँ दादी?"
"नईं तेरे से अच्छी तो अन्नो बोल लेवे। चल अन्नो तू पूरी कर। मेरो तो म्हौंडो, सूख गयो। एक पान का बीरा लगा

दे।"
मैं भागमभाग दादी के लिए पान का बीड़ा लगा लाई। उस वक्त अन्नो बिस्तर पर अपने दोनों हाथ सिर के पीछे कैंची बना कर लेटी हुई थी और कहानी चल रही थी।
"दादी फिर यह हुआ कि जैसे ही डाबरनैनी फूलमती को घर-दुआर पे दुतकार पड़ी, वह खम्म खम्म जीना उतर गई। सौंताल पर कन्हाई उसकी राह देख रहा था। उसने रानी का हाथ पकड़ा और अपनी कुटिया में ले गया। सात दिन में रानी अच्छी बिच्छी हो गई। मालिन ने दोनों की परितिया देखी तो बोली, "रे कन्हाई, राधा भी किशन से बड़ी ही, जे तेरी राधारानी ही दीखै।" डाबरनैनी वहीं रहने लगी। रोज़ सुबह मालिन और कन्हाई फूल तोड़ कर लाते, फूलमती उनकी मालायें बनाती।
इधर राजा सूरसेन उदास रहने लगे। माँ ने लब्बावती को बुला भेजा। लब्बावती ने भाई से पूछा, "प्यारे भैया, मेरी राजरानी भाभी में कौन खोट देखा जो उसे वनवास भेज दिया।"

सूरसेन ने कहा, "तेरी भौजाई हरजाई निकली। वह मालिन के बेटे के साथ खड़ी थी। दोनों हँस रहे थे।"
बहन बोली, "ये तो अनर्थ हुआ। अरे हँसना तो उसका स्वभाव था। अरे सूरज का उगना नदिया का बहना और चिड़िया का चूँ चूँ करना कभी किसी ने रोका है?"
राजा सूरसेन को लगा उन्होंने अपनी पत्नी को ज़्यादा ही सज़ा दे दी।
सात दिन राजा ने अधेड़बुन में बिता दिए। आठवें दिन लब्बावती की विदा थी। लब्बावती जाते जाते बोली, "भैया अगली बार मैं हँसते बोलते घर में आऊँ, भाभी को ले कर आओ।"

कई साल बीत गए। राजा रोज़ सोचते आज जाऊँ कल जाऊँ। आखिर एक दिन वे घोड़े पर सवार होकर निकले। साथ में कारिन्दे, मन्तरी और सन्तरी। जंगम जंगल में चलते-चलते राजा जी का गला चटक गया। घोड़ा अलग पियासा। एक जगह पेड़ों की छैयाँ और बावड़ी दिखी। राजा ने वहीं विश्राम की सोची। बावड़ी में ओके से लेके ज्योंही राजा पानी पीने झुके,किसी ने ऐसा तीर चलाया कि राजा के कान के पास से सन्नाता हुआ निकल गया। मन्तरी सन्तरी चौकन्ने हो गए। तभी सब ने देखा, थोड़ी दूर पर एक छोटा-सा लड़का साच्छात कन्हैया बना, पीताम्बर पहने खड़ा है और दनादन तीर चला रहा है। राजा कच्ची डोर में खिंचे उसके पास पहुँचे। छोरा बूझे राजा-वजीर। वह चुपचाप अपने काम में लगा रहा।

राजा ने बेबस मोह से पूछा, "तुम्हारा गाम क्या है, तुम्हारा नाम क्या है?" नन्हें बनवारी ने आधी नज़र राजा के लाव लश्कर पे डाली और कुटिया की तरफ़ जाते-जाते पुकारा "मैया मोरी जे लोगन से बचइयो री।" लरिका की मैया दौड़ी-दौड़ी आई। बिना किनारे का रंगीन मोटी धोती, मोटा ढीला जम्पर, नंगे पाँव पर लगती थी एकदम राजरानी। उसके मुख पर सात रंग झिलमिल झिलमिल नाचें।

राजा ने ध्यान से देखा। अरे ये तो उसकी डाबरनैनी फूलमती थी।
सूरसेन को अपनी सारी मान मरयादा बिसर गई। सबके सामने बोला, "परानपियारी तुम यहाँ कैसे?"
फूलमती ने एक हाथ लम्बा घूँघट काढ़ा और पीठ फेर कर खड़ी हो गई।

तब तक बनवारी का बाप कन्हाई आ गया। राजा ने कारिन्दों से कहा, "पकड़ लो इसे, जाने न पाए।"
कन्हाई बोला, "जाओ राजा जी तुम क्या प्रीत निभाओगे। महलन में बैठके राज करो।"
मन्तरी बोले, "बावला है, राजा की रानी को कौन सुख देगा। क्या खिलाएगा, क्या पिलाएगा?"

कन्हाई ने छाती ठोंक कर कहा, "पिरितिया खवाऊंगौ, पिरितिया पिलाऊंगौ। तुमने तो जाकेपिरान निकारै, मैंने जामें वापस जान डारी। तो जे हुई मेरी परानपियारी।"
"और जे चिरौंटा?" मन्तरी ने पूछा।

"जे हमारी डाली का फूल है।"
राजा के कलेजे में आग लगी। मालिन के बेटे की यह मजाल कि उसी की रानी को अपनी पत्नी बनाया वह भी डंके की चोट पर। उसने घुड़सवार सिपहिये दौड़ा दिए।"
दादी की ऊंघ हवा हो गई, "अन्नो तू ऐंचातानी बहौत कर रई ए। आगे मैं सुनाऊँ।"
अन्नो की समझ में नहीं आ रहा था कि कहानी को कैसे समेटे। उसने हारी मान ली, "अच्छा दादी तुम्हें करो खतम।"
दादी बोली, "हाँ तो कन्हाई और फूलमती बिसात भर लड़े। नन्हा बनवारी भी तान तान कर तीर चलायौ। पर तलवारों के आगे तीर और डंडा का चीज़। सौंताल के पल्ली पार की धरती लाल चक्क हो गई। थोड़ी देर में राजा के सिपहिया तलवारों की नोक पे तीन सिर उठाये लौट आए।"

मैंने कहा, "दादी तीनों मर गए?"
दादी ने उसांस भरी, "हम्बै लाली। तीनोंई ने बीरगति पाई। येईमारे आज तक सौंताल की धरती लाल दीखै। वहाँ पे सेम उगाओ तो हरी नहीं लाल ऊगे। अनार उगाओ तो कन्धारी को मात देवै। और तो और वहाँ के पंछी पखैरू के गेटुए पे भी लाल धारी जरूर होवै। ना रानी घर-दुआर छोड़ती ना बाकी ऐसी गत्त होती।"
अन्नो और मैं एक साथ बोले, "ग़लत, एकदम ग़लत। निर्मोही के साथ उमर काटने से अच्छा था वह जो उसने किया।"

शीर्ष पर जाएँ

डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

परदेशी

ममता कालिया

अजब परिवार है हमारा।

तीन भाई-बहन तीन देशों में बसे हैं सब एक दूसरे के लिए तरसते रहते हैं जब हुड़क तेज उठती हैं तो एक दूसरे को लंबे-लंबे फोन कर लेते हैं, प्यार-भरे कार्ड भेजते हैं, अगले साल मिलने का वादा करते हैं कुछ दिनों को जी ठहर जाता है।

पहले सब इकट्ठे रहते थे लखपत कोट का वह बड़ा मकान भी छोटा पड़ जाता वहीं शादियाँ हुई, वहीं नौकरी लगी बड़े भाई केंद्रीय विद्यालय में शिक्षक नियुक्त हुए बहन ट्रेनिंग कॉलेज में प्रशिक्षक नीरद कपूरथला कॉलेज में लेक्चरर हो गया।

भाई अखबारों का गहन अध्ययन करते थे अमरजीत अखबार की तरफ ताकती भी नहीं थी नीरद कॉलेज जाकर कई अखबारों की सुर्खियाँ देख लेता उसकी दिलचस्पी का क्षेत्र साहित्य था।

उन्हीं दिनों भाई को कैनेडा जाने का रास्ता नजर आया अखबार में वहाँ स्कूलों के लिए दर्जनों पद निकले थे भाई-भाभी ने चार फॉर्म मँगा लिए घर में बड़ा बावेला मचा।

बौजी और बीजी ने कहा, 'दोनों भाई इकट्ठे चले जाओगे, हम किसके सहारे जिएँगे?'

भाई ने कहा, 'अमरजीत है, पंकज है और आपकी सारी कबीलदारी यही है।'

'बेटों का हाथ लगे बिना तो सरग भी नहीं मिलता,' बीजी रोने लगीं।

भाई बोले 'एक बार हम वहाँ जम जाएँ तो आप दोनों को भी बुला लेंगे बल्कि अमरो और पंकज को भी वहीं काम दिला देंगे।'

शाम को नीरद कपूरथला से लौटा तो बीजी ने उससे कहा, 'तू तो बड़ा मीसना (घुन्ना) निकला अपने आप बाहर जाने का प्रोग्राम बना लिया।'

नीरद हक्का-बक्का सारी बात जानते ही वह भड़क गया, 'मेरे लिए फैसला लेने का हक किसी को नहीं है चाहे कैनडा हो, चाहे टिंबकटू, मैं कहीं नहीं जाऊँगा।' भाई ने समझाया, 'यहाँ से चालीस गुनी तनखा मिलेगी, घर का

सारा दलिद्दर धुल जाएगा।'

'आप धोओ अपना दलिद्दर मेरा फॉर्म कोई जमा न करे।'

'बेवकूफ, तू भरकर दस्तखत करेगा, तभी जमा होगा फॉर्म।'

'कहाँ हैं फॉर्म, लाओ मैं फाड़ दूँ,' नीरद उठा।

अमरजीत ने फार्म बीच में लपक लिया पंकज भी उस दिन वहीं आया हुआ था।

'तुम्हें नहीं जाना तो हमें दे दो हम भी निकल कर देखें इस नरक से।'

नीरद उलझ पड़ा, 'किसे नरक कह रही हो? इस घर को या उस घर को या अपनी नौकरियों को? हद है, जरा सी सेंध क्या मिली, तुम्हें यहाँ नरक दिखाई देने लगा?'

'क्या है यहाँ पर! सारे दिन मेहनत करो, गिने-गिनाए रुपए हाथ आते हैं चार ट्यूशन न करें तो घर का खर्च नहीं चलता आए दिन लूट-खसोट का आतंक।'

'जा बच्चा, तू भी गोरों का देस देख ले।,' बौजी ने कहा।

इस तरह एक-एक कर वे चारों चले गए हम भी बहुत दिन पंजाब नहीं रह पाए नीरद को इलाहाबाद युनिवर्सिटी में नौकरी मिल गई और हम सब इलाहाबादी बन गए।

इस बीच बच्चे छोटे से बड़े हो गए भाई की तीनों बेटियाँ और अमरो के चीनू मीनू हमारे ताक पर फोटोग्राफ बनकर रखे रहे उनके बारे में खबर मिलती रही कि सैंडी बहुत अच्छा पिआनो बजाती है, कि नीता ने सोशल वर्क में ग्रेजुएशन किया है और साधना की शादी वहीं के एक अमीर बाशिंदे से तय हो गई है हमारी स्मृतियों में वे अभी भी बच्चियाँ थीं, जो यहाँ से जाते वक्त रो रही थीं और कहती थीं, 'हमें नहीं जाना इतनी दूर, हम वापस आ जाएँगे।'

इस बार भाभी ने फोन पर कहा, 'भावना, हमारा बहुत अच्छा दोस्त रिचर्ड भारत जा रहा है एक हफ्ते राजस्थान घूमकर वह इलाहाबाद पहुँचेगा एक हफ्ते वह वहाँ रहेगा उसके आराम का पूरा ध्यान रखना घर की सफाई कर लेना कहीं भी गंदगी, मच्छर, छिपकली न दिखने पाए रिचर्ड डॉक्टर है तुम्हारे भाई उसे साथ लेकर आते, पर उन्हें अभी छुट्टी नहीं मिल रही हैं हमें तुम पर भरोसा है जैसे हमारे आने पर मेहमाननवाजी करती हो, वैसी ही करना।'

इस फोन के बाद काम के तामझाम में मैं बस चकरघिन्नी हो गई एक नजर घर पर डाली, दूसरी परिवार पर लगा, दोनों गड़बड़ हैं घर तो बिल्कुल अजायबघर बना हुआ था।

खाने के कमरे में बीजी का तख्त बिछा हुआ था ड्राइंगरूम का पलस्तर उखड़ा पड़ा था अंदर बच्चों ने अपने कमरे को कंप्यूटर-रूम बना रखा था पढ़नेवाले कमरे में कपड़े बिखरे रहते ड्रेसिंग टेबिल सीढ़ियों पर रखी थी और रसोई इतनी घिचपिच थी कि खुद मुझे ही उसमें सामान ढूँढने में गश आ जाता छोटे-से आयतन में बना यह फ्लैट ऐसा था कि इसमें मुहब्बत या मजबूरी के अलावा साथ रहने का कोई औचित्य नहीं था।

मैंने बच्चों से कहा, 'देखो, ताईजी के मेहमान तीन दिन बाद आ रहे हैं तुम अपना कमरा साफ कर लो बगलवाले कमरे में उन्हें ठहराएँगे वे तुम्हारा कमरा देखकर क्या सोचेंगे!'

बच्चों ने कोई ध्यान नहीं दिया दूसरी बार टोकने पर मन्नू अपने कमरे में पड़ी सारी किताबें, सी.डी. और तौलिए हमारे कमरे में पटक आया।

मैं घर-भर का कबाड़ पड़छत्ती पर डालती, आलमारियों के ऊपर चिनती, पौधों को छाँटती, पगलाई डोलती रही।

नीरद ने कहा, 'क्यों परेशान होती हो जैसा घर है, वैसा ही रहने दो अगर यहाँ उसे तकलीफ होगी तो अपने आप होटल में चला जाएगा।'

मेरे लिए यह तर्क ग्राह्य नहीं था वह क्या सोचेगा कि पढ़ी-लिखी लड़कियाँ हिंदुस्तान में ऐसे घर चलाती हैं। भाभी अलग खफा होंगी।

तीन दिन के घनघोर परिश्रम से मैंने अध्ययन-कक्ष में रद्दोबदल कर उसे अतिथि-कक्ष में तबदील कर दिया चुन-चुन कर घर की सभी नायाब चीजें यहाँ पहुँच गईं।

बिस्तर पर चार इंच का फोम का गद्दा, दीवारों पर पिकासो और विंशी की बनाई हुई तस्वीरों के फोटोप्रिंट, नया टर्किश तौलिया, विदेशी बाथरूम स्लिपर्स, नया जग और एक अदद फ्रिज भी कमरे के बाहर वाली जगह में रखवा दिया।

अन्नू ने इतनी तैयारियाँ देख कर कहा, 'वाह मम्मी! यह कमरा तो बिल्कुल विदेशी लग रहा है बस एक मेम की कसर हैं यहाँ पर।'

मैंने कहा, 'अन्नू, प्लीज तुम अपना म्यूजिक सिस्टम इस कमरे में लगा दो अगले हफ्ते तक की बात है।'

आश्चर्य कि बिना हुज्जत के दोनों बच्चों ने अपना जान से प्यारा म्यूजिक-सिस्टम अतिथि-कक्ष में फिट कर दिया मैंने चुन-चुन कर बाख, बिथोविन, मोजार्ट के कैसेट टेबिल पर रखे बच्चों ने कहा, 'हम थोड़ा पॉप भी रख देते हैं, नहीं तो उसका हाजमा खराब हो जाएगा।'

साढ़े छः फीट लंबा रिचर्ड पार्कर जब नीरद के साथ घर में घुसा तो कमरा उसकी उपस्थिति से एकदम भर गया वह सभी से गर्मजोशी से मिला बीजी को उसने हाथ जोड़ कर कहा, 'नमस्टे!'

मैंने उसके लिए चीज सैंडविचेज बना कर पहले से ही रख लिए थे जल्दी से चाय बनाई पुरानी सेविका मालती का मन नहीं माना इतनी दूर से आए मेहमान को सिर्फ एक चीज के साथ चाय पिलाते हैं कभी? उसने आलू-प्याज के पकौड़े बना डाले और पापड़ तल दिए रिचर्ड इतना सब देख कर भौचक रह गया उसने गप से एक पकौड़ा मुँह में रखा 'ऊ औ आ।'

पकौड़ा बहुत गर्म था रिचर्ड कुर्सी से उछला और पकौड़ा मुँह से बाहर निकला, बच्चों की तरफ देखकर हँसा, 'सॉरी' उसने कहा फिर पकौड़े को फूँक-फूँककर मुँह में डाला।

'डेलिशस', उसने कहा और तीन चौथाई प्लेट चट कर गया उसे चाय भी बढ़िया लगी यह कहना मुश्किल था कि हमारी मेहनत रंग दिखा रही थी या उसका मूड।

शाम को हम उसे नदी-किनारे घुमाने ले गए उसकी आदत थी, वह एक-एक चीज के इतिहास में जाने का प्रयत्न करता।

'यह घाट किसने बनवाया, कौन से सन् में बना?'

'ये मूर्तियाँ कौन से भगवान की हैं?'

'इतने सारे भगवानों से आप लोग कन्फ्यूज नहीं होते?'

'यह मल्लाह कब से नाव चलाता है, इसकी उम्र क्या है?'

जाहिर था कि हम उसके सभी सवालों के जवाब नहीं दे पाए घर आकर हमें यह भी लगा कि हम अपने परिवेश के विषय में कितने कम तथ्य जानते हैं।

बीजी ने कहा, 'नीरद, रिचर्ड से कह कि निकर बनियान में बाहर न निकले कपड़े पहन कर जाया करे।'

पर रिचर्ड को बहुत गर्मी लग रही थी वह कैनेडा के एलबर्टा इलाके से आया था, जहाँ तापमान हिमांक से कई डिग्री नीचे रहता है।

अंग्रेजी जानते हुए भी उसका लहजा समझने में हमें थोड़ी दिक्कत हो रही थी किसी तरह काम-चलाऊ बातें हो जातीं पर मैंने पाया, बीजी और बच्चों को ऐसी कोई परेशानी नहीं थी वे सब मिलकर घंटो टी.वी. देखते भाभी ने अपने ऑफिस और घर के अंदर-बाहर का एक वीडियो टेप भी भेजा था उसे वी.सी.आर पर लगाकर वह बताता जाता, क्या हो रहा है जो बात शब्दों से स्पष्ट न होती, वह अभिनय करके पूरी करता सब ठहाके लगाते बिना भाषा के वह बीजी को भाई के हाल बता देता थोड़ी देर को मैं दोनों के बीच दुभाषिया बनी फिर बीजी ने मुझे उठा दिया।

'इसकी बातें मेरी समझ आ रही हैं,' उन्होंने कहा।

पहली रात मैं मनाती रही कि ऊपर के कमरे में कहीं कोई छिपकली, चूहा अपनी दैनिक गश्त पर न आ जाय मच्छरों के खिलाफ कई इंतजाम पहले से कर रखे थे।

खाने का समय सकुशल बीता सीधा-सादा शाकाहारी भोजन था उसे अच्छा लगा पानी उबला हुआ था, फिर भी उसने नहीं पिया उसने मालती से कहा, 'चाय'।

हिन्दी के दो तीन शब्द वह वहीं से सीख कर आया था 'अच्छा, हाँ, नहीं' का उच्चारण और अर्थ वह जानता था।

यह सोचते हुए कि हर विदेशी को खजुराहो जाने की बेताबी होती है, हमने उसके लिए टूरिस्ट बस से वहाँ जाने का आरक्षण करवा दिया उसे बताया उसने गर्दन हिलाई 'नो, आइ प्लान टु गो टु सारनाथ।' (नहीं, मेरा इरादा सारनाथ जाने का है।)

'सारनाथ हम सब किसी भी दिन कार से चलेंगे,' नीरद ने कहा, 'पहले तुम वह जगह तो देख लो, जिसके लिए भारत आए हो।'

उसने कहा, वह ट्री ऑफ नॉलेज, 'बोधिवृक्ष - देखेगा उसकी बहन ने उससे बौद्ध उपासना के उपकरण मँगवाए हैं, वे खरीदेगा।'

हमारे लिए अपने काम से छुट्टी लेना मुश्किल था उसने कहा, 'मैं अकेले चला जाऊँगा आप मुझे गाड़ी में बिठा दें।'

अच्छे मेजबान की तरह हमने कहा, 'अभी जल्दी क्या है,' आए हो तो दो चार दिन रह लो।'

उसने अपनी डायरी दिखाई, जिसमें उसके एक महीने के प्रवास का पूरा टाइम-टेबिल बना हुआ था।

'अनजान जगह में अकेले जाते तुम्हें डर नहीं लगता? मैंने पूछा।

'क्या आपको मुझसे डर लगा? नहीं न! फिर मैं आपसे कैसे डर सकता हूँ? इनसान तो हर जगह एक-सा है।'

'पर तुम्हारे पास हमारी भाषा नहीं है अपनी जरूरत कैसे बताते हो?'

'काम चल जाता है।'

'देखो, नीरद बोले, 'इस देश में जितने अच्छे लोग हैं, उतने बुरे भी कोई दुश्मन जैसा मिल गया, तब?'

'मुझे आपके भाई ने बताया था कि भारत में पानी के सिवा तुम्हारा कोई दुश्मन नहीं होगा,' रिचर्ड ने हँसते हुए कहा।

खजुराहो का आरक्षण रद्द करवा दिया गया अगले दो दिन का समय उसने ज्यादातर घर में बिताया दोपहर में वह आनंद-भवन देखकर आया रात के खाने पर हम सब इकट्ठा बैठकर बातें करते रहे।

परिचय का प्रथम संकोच टूटने के बाद अन्नू मन्नू अपनी पुरानी बुलंदी पर थे मन्नू ने पानी अपने गिलास में डालने के चक्कर में मेज पर फैला दिया मैं परेशान हो उठी।

'कितनी बार कहा है, तुम दोनों छोटी मेज पर खाया करो।,' मैंने भुनभुनाते हुए झाड़न की तलाश की, जो नहीं मिला।

'तुम्हें कनरस पड़ा हुआ है बड़ों के बीच घुसकर बैठना क्या बच्चों को शोभा देता हैं?' मैं और भी बोलती दिन भर की भड़ास निकलने को थी वैसे भी परिवार का खयाल है कि डाँटते हुए मुझे नशा चढ़ जाता है गुस्से में मैं जनम-जनम की गलतियाँ गिनते लगती हूँ। दुखी होकर मन्नू ने खाना ही छोड़ दिया रिचर्ड ने इसरार किया, 'मन्नू, मैं तुम्हारा दोस्त हूँ मेरे कहने से खा लो प्लीज।'

'हमें भूख नहीं हैं।' उसने कहा।

उसके छोड़ते ही अन्नू ने भी अपनी प्लेट सरका दी।, 'हम भी नहीं खाएँगे।'

बीजी बोली, 'इधर तो आ, मैं तुम दोनों को खिलाऊँगी भगतिन बिल्ली की कहानी सुननी है?'

जब ये दोनों छोटे थे, दादी से कहानी सुनते हुए, उन्हीं के हाथ से खाना खाते थे अब बच्चे कुछ बड़े हो गए थे, पर खाने के समय कभी भी छोटे बन जाते।

दोनों के मुँह फूले रहे।

बीजी ने कहा, 'जो मेरे पास पहले आएगा, उसे एक रुपया मिलेगा।'

दोनों दादी के तख्त पर एक साथ उछलकर चढ़े मालती ने नई प्लेट में खाना लगाकर बीजी को दिया बीजी ने दोनों को बातों में ऐसा लगाया कि वे सारी रोटियाँ चट कर गए।

मेरा मूड अभी भी उखड़ा हुआ था हमारे घर में दो दिन भी सभ्यता से रहना दूभर है। बच्चों को अक्ल सिखाओ तो बड़े बोलने लगते हैं इसीलिए शायद रिचर्ड यहाँ से जल्दी जा रहा है।

रिचर्ड ने भोजन के बाद चाय पीते हुए हम दोनों से कहा, 'आपकी मेहमाननवाजी को मैं कभी भुला नहीं पाऊँगा। आपके परिवार में मुझे बहुत अपनापन मिला है।'

'और यहाँ की गड़बड़ियाँ भी कभी नहीं भूला पाओगे!' मैंने कहा।

'जिन्हें आप गड़बड़ियाँ कह रही हैं, उनके लिए हमारे देश में तरसते हैं लोग कहाँ मिलती हैं घर-परिवार की गर्मी मुझे देखिए, बारह साल की उम्र से अकेला हूँ माँ-बाप का तलाक हो गया पहले माँ के साथ रहा दो साल। बाद उसने दूसरी शादी कर ली फिर पिता के साथ रहा। उसके साल भर बाद पिता ने भी शादी कर ली मेरे लिए कहीं जगह नहीं बची थी।'

'अब तो आप वयस्क हैं।' मैंने कहा।

'पर कितना अकेला एक बात बताऊँ! वहाँ अलबर्टा में हम सब अकेले हैं, द्वीप की तरह आपके भाई कभी-कभी कहते हैं, नीरद ने ठीक किया, जो परदेस नहीं आया।

नीरद को अपने पर नाज हुआ बोला, 'रिचर्ड, मैं तो तभी जानता था कि रोटी के लिए कोई अपनी मिट्टी नहीं छोड़ता मेरा तो लिखने-पढ़ने का काम है शोहरत, बदनामी जो मिलनी है, यहीं मिले सात समुंदर पार चला गया तो कौन सुनेगा मेरी आवाज, मेरे शब्दों में से सारी खुशबू निकल जाएगी।'

'राइट,' रिचर्ड ने कहा, 'तुम्हारे भाई को उसका एहसास है। आपके घर में अभी डिनर के समय तीन पीढ़ियाँ एक साथ खाना खा रही थी। अरे, दुर्लभ सुख है यह ऐसा दृश्य देखे मुझे बरसों हो गए कि बच्चों के माँ-बाप अपने माँ-बाप के सामने आज्ञाकारी बच्चे बन जाएँ। तीन पीढ़ियाँ एक छत के नीचे, एक कमरे में प्रेम से बैठी हैं, कहीं कोई तनाव नहीं। आपके बच्चों को एक नॉर्मल लड़कपन मिल रहा है बहुत बड़ी बात है यह! इसे कभी कम करके मत देखिएगा।'

रिचर्ड सुबह बनारस चला गया, पर मुझे जीवन-भर के लिए शिक्षित कर गया वह अलमस्त परदेसी सिर्फ सैलानी नहीं था।

शीर्ष पर जाएँ

डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

पीठ

ममता कालिया

वह आईमैक्स एडलैब्स के विशाल गुंबद छविगृह के परिसर में, 'एडोरा' के शोरूम में, तस्वीर की तरह, एक स्टूल पर बैठी थी। उसके चारों ओर तरह-तरह के विद्युत उपकरण चल-फिर रहे थे, जल-बुझ रहे थे। स्वचालित सीढ़ियाँ और पारदर्शी लिफ्ट को एक बार नजरअंदाज कर भी दिया जाए पर विद्युत झरने पर तो गौर करना ही पड़ा जो अपनी हरी रोशनी से उसे सावन की घटा बना रहा था।

कैफे की कुर्सी पर टिका-टिका हर्ष उसे बड़ी देर तक देखता रहा। उसे लगा, उसके सामने 4 गुणे 6 का कैनवास लगा है जिस पर झुका हुआ वह इस ताम्रसुंदरी का चित्र बना रहा है। पहले वह हुसैन की तरह लंबी, खड़ी, तिरछी बेधड़क रेखाएँ खींचता है, फिर वह रामकुमार की तरह उसमें बारीकियाँ भर रहा है।

लेकिन बारीकियाँ भरने के लिए, अपने मॉडल को नजदीक से जानना होता है। वह कैफे से उठा।

एकदम सीधे उस तक पहुँचने की हिम्मत नहीं हुई।

वह गुंबद परिसर में बेमतलब घूमता रहा।

उसने नरम चमड़े के मूढ़ों पर बैठकर देखा। दूर से ये मूढ़े विशाल गठरी जैसे लग रहे थे लेकिन बैठते ही ये आरामकुर्सी में तब्दील हो गए। ज्यादा महँगे भी नहीं थे। लेकिन यह तय था कि ये जगह बहुत घेरते।

हर्ष को अपना कमरा याद आया जो इतना छोटा था कि वह कभी वहाँ लाइफ-साइज तस्वीर पर खुलकर, फैलकर काम नहीं कर पाया। वह सोचता रहा लड़की के पास जाए या न जाए।

उसे दर्शन की याद आई। दर्शन को कहानियाँ, नाटक लिखने का शौक था। पहले पहल वह विशुद्ध स्वांतः सुखाय लिखा करता था। फिर मित्रः सुखाय लिखने लगा। अब तो बाकायदा बहुजन हिताय बहुजन सुखाय लेखन करता और प्रसार भारती की गोद में खेलता है।

कितना अजीब है कि बी.ए. किए हमें चार बरस बीतें या चालीस, हम उन दिनों के दोस्तों को इतनी भावुकता से याद करते हैं। वे दिन, वे दोस्त, किसी पुरानी फिल्म की तरह, हमारी आँखों में चलते-फिरते जिंदा होते जाते हैं। उनकी स्मृतियाँ हमें स्पंदित करती रहती हैं। उसी परिसर में थोड़ा आगे, बच्चों के लिए खेल-पार्क था। यहाँ विद्युतचालित पागल गति के खिलौने थे, दुश्मन टैंकों को मार गिराने वाली कड़कड़ाती बंदूकें और गनगनाती

मोटरसाइकिलें। इन वीडियो खेलों में गति नहीं, गति का संभ्रम था। बच्चों के मनोरंजन मे कौतुक, विस्मय, सौंदर्य, संगीत के लिए कोई स्पेस नहीं था। भारी बक्सों में विकृत आवाजें और दृश्य भरे हुए थे। बच्चों के मूढ़ माँ-बाप उन्हें इन खेलों में व्यस्त कर गर्व और आनंद से मुस्करा रहे थे।

स्वचालित सीढ़ियों के नीचे फव्वारा था और छोटा-सा तालाब। तालाब के ठीक सामने वह स्टॉल था जिसके स्टूल पर वह लड़की बैठी थी, निश्चल।

हर्ष को अफसोस हुआ कि वह अपनी स्केचबुक साथ नहीं लाया। 'एडोरा' में बिजली से चलने वाले घरेलू उपकरणों की प्रदर्शनी लगी थी। स्टॉल में दो लड़के दाईं और बाईं ओर खड़े थे।

हर्ष बेमतलब महारानी मिक्सी का वह कागज पढ़ने लगा जिसमें संजीव कपूर हँसते हुए न्योत रहा था, 'खाना खजाना की शान, महारानी मिक्सी से पिसी दालें और मसाले।'

उसके हाथ में कागज देखते ही ताम्रसुंदरी हरकत में आई। स्टूल से उतर वह मिक्सी काउंटर पर पहुँची। उसने अपनी बड़ी-बड़ी आँखे उठाकर हर्ष को देखा और बोली, 'यह हमारा सबसे अच्छा उत्पाद है। इसमें कड़ी से कड़ी चीज भी मिनटों में पिस जाती है। मैं आपको हल्दी पीसकर दिखाऊँ!'

'नहीं, नहीं,' हर्ष कहना चाहता था पर तब तक लड़की ने हल्दी की गाँठें डाल कर मिक्सी चला दी। हाथ के इशारे से हर्ष ने उसे रोका। उसे बताया कि नून, तेल, हल्दी की उसके जीवन में, फिलहाल, कोई जगह नहीं। लड़की कपड़े धोने का उपकरण दिखाने लगी।

'देखिए, यह सामने से खुलने वाली मशीन है। इसमें कपड़े ऐसे धुलते हैं', उसने हाथों से मूक अभिनय किया।

हर्ष को हँसी आ गई। क्या यह लड़की उसे अपना संभावित ग्राहक समझती है। वह तो गुणग्राहक की भूमिका में आया है। उसने कहा, 'जब कपड़े मैले हो जाते हैं, मैं नए खरीद लेता हूँ।'

'क्या आप इतने अमीर हैं?' लड़की की आँखें कुछ फैल गई।

'नहीं, मैं इतना आलसी हूँ।'

लड़की ने एक क्षन दिलचस्पी से हर्ष को देखा, फिर वह वापस स्टूल की तरफ जाने लगी।

हर्ष को लगा उसे तत्काल कुछ करना होगा। वह यकायक बोल पड़ा, 'क्या आप मेरे साथ कॉफी पीना पसंद करेंगी, यहीं सामने।'

उसकी आशा के विपरीत लड़की ने कहा, 'हाँ प्लीज, मैं बहुत ऊब रही हूँ।'

'यहाँ की बिक्री?' हर्ष ने पूछा।

'बिक्री करना मेरा काम नहीं है। मैं सामान का प्रदर्शन करती हूँ। बिक्री वाले लड़के यहाँ खड़े हैं,' उसने दोनों लड़कों की तरफ इशारा किया।

लड़की ने अपना पर्स स्टूल से उठाया। लड़कों से कहा, 'दस मिनट के लिए जाती हूँ, ठीक है।'

लड़कों ने गर्दन हिला दी।

हर्ष को लगा, लड़की खुली किताब है। पहली मुलाकात में सबकुछ बता दिया। नाम - इंदुजा, शिक्षा - बी.एससी., काम - प्रत्यक्ष प्रचार।

'अर्थात मॉडलिंग!' हर्ष ने कहा।

'बिल्कुल नहीं। मैं मटक-मटक कर रैंप पर कैटवॉक कभी न करूँ,' लड़की को मॉडल शब्द से परहेज था।

'हम कलाकारों की दुनिया में मॉडल इतना खराब शब्द नहीं समझा जाता। हमारे लिए तो सारी सृष्टि ही मॉडल है।'

'सिर्फ भू-दृश्यों के लिए। आजकल कौन बताता है भू-दृश्य। आपकी दुनिया में मॉडल का मतलब आज भी सजीव, नग्न आकृति है। आपके यहाँ मॉडल और नग्नता पर्यायवाची शब्द हैं।'

हर्ष ने लड़की को जैसे समझा, उससे वह कहीं ज्यादा सचेत निकली। उसने कहा, 'आपके दस मिनट हो गए हैं। आप फिर कभी मिलें तो मैं आपको बताऊँ कि पेंटिंग की खूबसूरती और खुसूसियत क्या हैं।'

इंदुजा ने कहा, 'ठीक है हर्ष।'

हर्ष चौंका, 'आप मेरा नाम जानती हैं?'

'हाँ, जहाँगीर आर्ट गैलरी में आप अपनी एकल प्रदर्शनी में अलग और अकेले खड़े थे। तब मैंने आपकी तस्वीरें देखी थीं।'

हर्ष बहुत खुश हो गया।

'देखता हूँ, विज्ञान की पढ़ाई ने कला के दरवाजे आपके लिए बंद नहीं किए।'

'दरवाजे तो सिर्फ रोजगार के बंद पड़े हैं।'

'मगर यह काम जो कर रही हैं?'

'यह तो दस दिन का काम है। पाँच हजार का अनुबंध है। पाँच सौ रुपए रोज, उसके बाद छुट्टी।'

'फिर क्या करेंगी?'

'किसी और चीज का प्रचार करूँगी। प्रस्ताव आते रहते हैं।'

'कल आएँगी?'

'बताया न दस दिन का कैंप हैं। आज तो दूसरा ही दिन है।'

जानकारी छोटी थी पर हर्ष को बड़ी लगी। इतनी बड़ी कि उसे दर्शन को बताने की जल्दी हो गई।

दर्शन घर पर अगली स्क्रिप्ट पर काम कर रहा था। हर्ष का तरोताजा, क्लीन शेव्ड चेहरा देखकर बोला, 'लाइन मारने जा रहे हो या लाइन मारकर आ रहे हो?'

हर्ष ने भवें सिकोड़ीं, 'हर हफ्ते सड़ियल सीरियल लिखते-लिखते तुम्हारी भाषा बर्बाद हो रही है। लाइन मारना क्या होता है बोलो?'

दर्शन सकपका गया। जब से वह हफ्तावार लेखन करने लगा था, पैसा तो उसके ऊपर बरस रहा था पर उसके आत्मविश्वास में कमी आई थी।

हालाँकि उसकी निरीक्षण-क्षमता और विसंगति-बोध पहले से तेज हुआ था, उसे हमेशा लगता कि कल कोई बेहतर लिक्खाड़ आकर उसके साम्राज्य पर कब्जा जमा लेगा।

हर्ष अपने क्षेत्र का फ्री लांसर था। पेंटिंग में उस पर न कोई नियम थोपे जा सकते थे, न शर्तें। अब तक उसे नौकरी में बाँधने के समस्त प्रयास विफल सिद्ध हुए थे। एक बार मुंबई शिपिंग कॉरपोरेशन की कलाप्रेमी मालकिन ने बड़े इसरार से उसे अपने सुसज्जित बँगले में एक कमरा देकर कहा था, 'हर्ष जी मैं चाहती हूँ आप मेरे घर को एकदम शांतिनिकेतन बना दें। इसकी हर दीवार पर आकर हस्ताक्षर सहित चित्र सजे।'

उसने चित्रकार के लिए नई-नकोर कैनवस, तूलिका और रंग मँगा दिए।

हर्ष तीसरे ही दिन वहाँ से भाग आया, अधूरी तस्वीर वहीं छोड़कर। साथी कलाकारों ने पूछा, 'क्या हुआ यार? मालकिन ने तुम्हारी ईगो से छेड़छाड़ कर दी क्या?'

हर्ष ने सिगरेट का टोटा जमीन पर रगड़कर बुझाते हुए कहा, 'नहीं यार, पर इतने चिकने वैभव में पेंटिंग तो क्या मुझसे पॉटी भी नहीं उतरती। वह मेरी दुनिया नहीं। दो रातों से सो ही नहीं पाया।'

इरफान उसे जानता था। उसने कहा, 'तुम्हें नींद तभी आती है, जब पंद्रह बीस मिनट अपने कमरे का झड़ता पलस्तर टकटकी लगाकर देखते रहो।'

'कसम से मुझे अपना कमरा बड़ा याद आया।'

ऐसे बेढब आदमी से बड़े ढब से बात करनी होती है, दर्शन को इसका अहसास था।

'सॉरी यार, मामला गंभीर है क्या?'

अगले दिन दर्शक को ताम्रसुंदरी दिखाई गई। तय हुआ हर्ष आगे बढ़े।

महीने भर हर्ष ने बहुत काम किया। दो तस्वीरें पूरी और एक अधूरी बनाईं। दोनों तस्वीरों के ग्राहक भी फौरन मिल गए। वह रोज आईमैक्स गुंबद छविगृह जाता रहा और बाद में दादर स्टेशन पर मँडराता रहा क्योंकि इंदुजा दादर में रहती थी। जल्द उसने दोस्तों को खबर दी कि वह इंदुजा से शादी करेगा।

इंदुजा शायद इतनी जल्दबाजी पसंद न करती पर उसके घर वाले उसकी शादी के बारे में सोचना बंद कर चुके थे। वे उससे छोटी लड़की की सगाई कर चुके थे और अब लड़के की शादी की तैयारी में थे। वे इंदुजा को समझाते, 'तुम इतना कमाओ कि तुम्हें शादी-ब्याह की परवाह ही न रहे। पाँच सौ रुपए रोज में जो मर्जी करो। शादी में सौ झंझट हैं।'

इन बातों से इंदुजा भड़की हुई थी। फिर हर्ष जैसा सुदर्शन विकल्प जो मिल रहा था।

दर्शन ने पग-पग पर इन प्रेमियों का साथ दिया। वह अपनी छोटी-सी कार, बड़े से फ्लाइओवर के नीचे मामा लांड्री के पास पार्क कर, दादर में दिन भर इंतजार करता रहा कि कब इंदुजा घर से भाग कर आए और वह उसे गंतव्य तक पहुँचाए। अदालत से विवाह प्रमाणित हो जाने के बाद दर्शन ने ही इंदुजा के घर तार किया। वकील की सलाह के मुताबिक दर्शन इंदुजा के घर पर भी स्वयं सूचना देने गया कि उसकी शादी हो गई।

अगले कुछ महीने दोस्तों ने हर्ष का नाम हर्षातिरेक रख दिया। उसका सारा ढब ही बदल गया। अब उसके घर वक्त-बेवक्त बियर-बैठकी नहीं हो सकती थी। दोस्तों के घर उसके चक्कर कम हो गए। कला-वीथियों में कभी सब टकरा जाते। हर्ष कहता वह जल्दी उनकी गप्प-गोष्ठी में शामिल होगा पर आजकल एक पीस पर काम चल रहा है।

'मास्टरपीस!' दर्शन पूछता।

'यह तुम्हारे हिंदी लेखन की दुनिया नहीं जिसमें जो भी, जब भी लिखा जाता है, मास्टरपीस ही होता है।' हर्ष हँसता। लेकिन मन ही मन उसे अहसास होता कि दोस्त बहुत गलत भी नहीं कह रहे। जिस पीस पर वह काम कर रहा था, वह उसके लिए खास मायने रखता था। इस तस्वीर की शुरुआत में एक इतिहास था।

इंदुजा की तांबई रूप-राशि का ऐश्वर्य उसे दिन पर दिन रससिक्त करता जा रहा था। इंदुजा को भी हर्ष के संग एक-मन एक-प्राण की अनुभूति बनी हुई थी। गर्मियों की एक रात उमस से घबराकर इंदुजा ने एकदम महीन मलमल का कुर्ता पहन लिया, बिना अंतःवस्त्रों के। षटकोणीय लैंपशेड की आड़ी-तिरछी किरणें उसकी पीठ को जगमगा गईं। उसकी तांबई त्वचा पर सुनहरी प्रकाश-रश्मियाँ खो खो खेल रही थीं। उस वक्त हर्ष की उपस्थिति और अपनी देह की अवस्थिति से निसंग वह कुर्ते का आगे का हिस्सा उठाकर अपने को हवा कर रही थी।

नहीं, हर्ष तुरंत कागज पेंसिल लेकर नहीं आया। उस क्षण तो वह तपे हुए तांबे का स्लोप निहारता रहा। उस स्लोप में मेरूदंड की दो-तीन हड्डियाँ उभरी हुई थीं, जैसे दो-तीन पड़ाव।

इंदुजा ने घूम कर हर्ष को देखा। जैसे उसे पता चल गया कि हर्ष क्या सोच रहा है। उसने कुर्ता नीचे किया और कहा, 'इस बार कूलर जरूर लगवा लो। कमरा भट्टी की तरह तप रहा है।'

'मैं भी।'

'लेकिन मैं नहीं। मैं नहाने जा रही हूँ।'

इंदुजा कमरे से चली गई पर उसकी छवि हर्ष की आँखों में समा गई। बगल के अधकमरे में उसने स्टूडियो बना रखा था। वहाँ बेतरतीब कागज, हार्डबोर्ड, रंग, ब्रश पड़े रहते। थिनर की गंध हमेशा इस कमरे में कैद रहती। यहाँ बिछी दरी में भी तरह-तरह के रंगों के निशान पड़े थे। एक कोने में मेज पर चारकोल के टुकड़े, प्लास्टर ऑफ पेरिस की छोटी थैली और रंग-पुती शीशी में पानी रखा था।

आधार चित्र बनाने में हर्ष को देर नहीं लगी।

रंग और रेखाओं के विवरण में बहुत सावधानी बरतनी थी।

हर्ष रात भर चित्र में लगा रहा।

इंदुजा एक बार आकर देख गई।

आधी रात जब उसकी नींद खुली, वह फिर स्टुडियो में आई।

अब तक चित्र स्पष्ट हो गया था।

उसने ऐतराज किया, 'देखो, तुम्हें पता है, मुझे मॉडलिंग से चिढ़ है। तुमने मेरा चित्र क्यों बनाया?'

'इंदु इस पीस में मेरे सत्ताईस सालों के संस्मरण हैं।'

हर्ष ने कई सैशन में चित्र में कुछ परिवर्तन किए। स्मरण-शक्ति ने उसका साथ दिया। अब यह पीठ अकेली इंदुजा की नहीं थी, इसमें कई पीठों की स्मृतियाँ आ मिली थीं। इस पीठ में माधुरी दीक्षित की पीठ थी, स्मिता पाटील की पीठ थी, यह पीठ कमनीय से अधिक कोमल थी, कोमल से अधिक कृश थी। इसमें निराला की क्लासिक कविता 'वह तोड़ती पत्थर' वाली मजदूरनी की भी पीठ थी। यह कई-कई सुधियों की पीठ थी। पूरे कैनवस पर अकेली, लंबी, साँवली आकृति थी जो उत्तान भी थी और ढलान भी।

यह तस्वीर एक साकार स्वप्न की तरह बनी। जिस दिन राष्ट्रीय कला-वीथि में अन्य चित्रों के साथ इसे प्रस्तुत किया गया, बाकी चित्र जैसे अनुपस्थित हो गए। स्वयं उसके साथी कलाकार हर्ष की सराहना किए बगैर न रह सके। कला समीक्षकों ने अखबारों में हर्ष की चित्रकला में अमृता शेरगिल से लगाकर जतिन दास तक से आगे की संभावनाएँ ढूँढ़ी। और तो और कला-वीथि के बाहर 'पीठ' चित्र के फोटो प्रिंट बिकने लगे।

शहर के सबसे अमीर उद्योगपति ने कई लाख में चित्र खरीद लिया। दोस्तों ने दावत माँगी।

'सूर्या' में पार्टी रखी गई। इस शाम के लिए इंदुजा ने सलमे जड़ी काली ड्रेस चुनी और हर्ष ने क्रीम कलर का कुर्ता सेट। पार्टी में सबकुछ बेहतरीन रहा।

रुखसत होते रात के एक बज गया। नवरोज, इरफान, दर्शन ने बड़ी मुबारकें दीं। तभी दर्शन ने कहा, 'हर्ष इस मास्टरपीस का श्रेय तुम्हें नहीं, तुम्हारी मॉडल को जाता है।'

'मैंने मॉडल कहाँ इस्तेमाल किया?' हर्ष ने विस्मय दिखाया।

'हम भी समझते हैं दोस्त। यह इंदुजा की पीठ है, शत-प्रतिशत।'

मुझे तो पता भी नहीं, बाय गॉड, इंदुजा ने आश्चर्य दिखाया।

'तुम उधर के मेहमानों पर ध्यान दो,' हर्ष ने इशारे से इंदुजा को हॉल के दूसरे कोने में भेज दिया।

घर लौटकर इंदुजा ने कपड़े बदलते हुए कहा, 'आज अपनी सहेलियों से मिलकर बड़ा अच्छा लगा। ये सब मेरे साथ मीडिया पब्लिसिटी में थीं। सोचती हूँ, मैं भी फिर काम शुरू कर दूँ। घर में बोर होती रहती हूँ।'

'नहीं,' हर्ष ने कुछ कठोरता से कहा, 'तुम कहीं नहीं जाओगी।'

इंदुजा ने शरारत से कहा, 'प्यार-मुहब्बत में सात लीवर का ताला नहीं लगाया जाता हर्ष। मैं तो वह प्रत्यक्ष प्रदर्शन वाला काम बड़ा मिस करती हूँ।'

हर्ष ने उसे पकड़कर झिंझोड़ दिया, 'तुम्हें प्रदर्शन का चस्का लगा है। बताओ दर्शन से तुम्हारा क्या रिश्ता है? उसने कैसे जाना यह तुम्हारी पीठ की तस्वीर है।'

'पागल हो, मैं क्या जानूँ। दर्शन तुम्हारा दोस्त है। मैं क्या तुम्हारे दोस्त को पीठ दिखाती फिरती हूँ?'

'हो सकता है उसने तुम्हें नहाते देख लिया हो, लापरवाह तो तुम हो ही।'

'हर्ष तुम मनोरोगी की तरह बोल रहे हो। बाथरूम में दरवाजा नहीं है पर पर्दा तो है न। और सारे दिन तो तुम घर पर ही होते हो।'

हर्ष पर कोई तर्क का असर न कर सका। वह विषादग्रस्त हो गया। सफलता के बावजूद वह गुमसुम रहने लगा। लोग इस मौन को उसकी संवेदना और गरिमा से जोड़ रहे थे। आए दिन पत्रकार उसका साक्षात्कार लेने आते। वह अपनी अन्य सभी तस्वीरों पर बोलता लेकिन पुरस्कृत तस्वीर 'पीठ' पर चुप लगा जाता। उसे लगता मीडिया उसका जीवन उघाड़ने का षड्यंत्र रच रहा है।

शीर्ष पर जाएँ

डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

बड़े दिन की पूर्व साँझ

ममता कालिया

मुझे नृत्य नहीं आता था। रुचि भी नहीं थी। मैंने ऐसा ही कहा था।

वह बोला - आता मुझे भी नहीं है।

मैंने सोचा बात खत्म है।

उसने हाथ में पकड़ी मोमबत्ती की तरफ देखा और हकबकाया सा हँस दिया - यह मैंने ले ली थी। मुझे पता नहीं था इसका मतलब यहाँ यह होता है।

सब अपनी अपनी मोमबत्तियों और लड़कियों के साथ फ्लोर पर थे। बैंड उसका इंतजार कर रहा था।

- देखिए प्लीज, मेरे दोस्तों में मेरी बहुत हँसी होगी अगर मैं नाच न पाया।

वह तब तक नर्वस हो गया था।

मैं उससे ज्यादा अटपटी हालत में थी। मैंने रूप की तरफ देखा, फिर उसकी तरफ।

मैंने निर्णयात्मक ढंग से कहा

- मैं शादीशुदा हूँ, यह मेरे पति हैं।

उसने मुझे छोड़ रूप से प्रार्थना करनी शुरु कर दी। बड़े दिन की पूर्व साँझ को नृत्य जाने बिना भी नाचना मैं अजीब न मानती, पर रूप ने मोमबत्ती नहीं खरीदी थी और हमारी शादी को सिर्फ पाँच दिन गुजरे थे। साढ़े चार दिन हम एक ही कमरे में कैद रहे थे और उठने के नाम पर बाथरूम तक जाते थे।

आज बाहर आते समय मुझे लगा, मैंने कहा भी - दिन सफेद नहीं लग रहा तुम्हें?

रूप ने सिर्फ कहा - लोग अभी भी बस की क्यू में खड़े हैं।

वह रूप से बात कर चुकने पर मेरी ओर ऐसे बढ़ा कि उसे अनुमति मिल गई है। मैंने रूप की ओर बिलकुल पत्नियों वाली निगाह से देखा। वह चौड़ा बड़ा पैग मुँह में उड़ेल रहा था।

हमारे फ्लोर पर आते ही बैंड शुरु हो गया। वह लड़का खुश था। उसने मोमबत्ती जला ली थी और ढूँढ़ ढूँढ़ कर दोस्तों की ओर देख रहा था। जिस किसी दोस्त से उसकी आँख मिल जाती, वह मुझे अधिक कस कर पकड़ लेता जैसे बच्चा एक और बच्चे को देख कर अपना खिलौना पकड़ता है।

मैं सोच रही थी वह मुझसे बोलेगा। उसे शायद नृत्य की तहजीब का पता न था। वह मुझसे बिलकुल बात नहीं कर रहा था, बस नर्वसनेस में बार-बार मुस्करा रहा था। उसे इस बात का काफी ख्याल था कि मोम मेरी साड़ी पर न गिर जाए।

प्रथा के विपरीत मैंने ही बात शुरु की - तुम्हारा नाम शायद जोशी है।

उसने कहा - नहीं, भार्गव!

- ऐसा नहीं लगता कि तुम पहली बार नाच रहे हो।

वह चुप रहा। थोड़ी देर बाद उसने मुझसे फिर माफी माँगी - मैंने आज आपको बड़ा तंग किया, पर नृत्य करना मेरे लिए जरूरी था। यह एक...।

मैंने बीच में टोक दिया - मैं समझती हूँ।

वह मुझे आप कह कर संबोधित कर रहा था। मैंने अनुमान लगाया कि उसकी शादी अभी नहीं हुई थी। शादी के पहले मैं भी इतने लोगों को आप कहा करती थी कि अब मुझे ताज्जुब होता था।

वह बहुत छोटा और अकेला लग रहा था।

रूप को मैं जहाँ खड़ा छोड़ आई थी, उस ओर इस वक्त मेरी पीठ थी। मैंने उससे कहा - जरा देखना मेरे पति वहीं खड़े हैं क्या?

उसने कहा - नहीं, वह यहाँ नजर नहीं आते।

थोड़ी देर के लिए उसे पर्याप्त व्यस्तता मिल गई। जल्दी ही उसने बताया - हाँ, वह वहाँ हैं, उन्होंने एक और पैग ले रखा है।

वह रूप को रुचि से देखता रहा।

- वह उतना पी सकेंगे, मेरा मतलब, होश रखते हुए?

मैं हँसी, मैंने कहा - इस बात की चिंता मेरी नहीं।

वह डर गया। उसने मुझे ध्यान से देखा।

मैंने बताया - नहीं, मैं नहीं पीती।

वह दु:खी हो गया था - मैं ज्यादा नहीं पी सकता। हमारे मैस में सिर्फ ड्रिंक्स की पार्टियाँ होती हैं तो बड़ी असुविधा होती है।

मैंने कहा - तुमने घर पर कभी नहीं पी होगी।

उसने गर्व से बताया कि उसके घर में अंडा भी नहीं खाया जाता। जब से वह एयरफोर्स में आया तभी से उसने पहली बार यह सब देखा। घर पर उसने घरवालों को सिर्फ दूध, चाय या पानी पीते देखा था।

मैंने पूछा - तुमने चखी है?

- हाँ, मुझे बहुत कड़वी लगी है।

मैंने कहा - मुझे कड़वाहट पसंद है।

उसने मेरी तरफ ध्यान से देखा।

मैंने फिर आश्वासन दिया कि मैं वाकई नहीं पीती।

उस ओर जब तक मेरा मुँह हुआ, रूप वहाँ नहीं था।

मैंने एकदम उससे पूछा - मेरे पति कहाँ हैं?

वह सकपका गया - मैंने नहीं देखा; मुझे नहीं मालूम; मुझे अफसोस है।

मैंने उससे कहा - मैं जाना चाहूँगी।

भार्गव ने मुझे समझाना चाहा कि डांस नंबर के बीच में से जाने से उसकी स्थिति कितनी अजीब हो जाएगी।

उसने कहा - आपके पति बाग में गए होंगे, आ जाएँगे।

मुझे हँसी आने लगी। मैं रूप को ढूँढ़ने नहीं जा रही थी। दरअसल मैं उस ऊलजूलूल कवायद से तंग आ गई थी। अनभ्यस्त होने की वजह से हमारे जूते बार-बार एक दूसरे के पैर पर पड़ रहे थे। वह मेरी साड़ी पर बहुत बार पैर रख चुका था और मुझे उसके फटने की आशंका थी।

उसने कहा - मेरी मोमबत्ती के नीचे एक नंबर है, अगर उद्घोषणाओं के बाद यह शेष रहा तो मुझे कोई उपहार मिलेगा।

मैंने फ्लोर पर गिना, चार जोड़े बचे थे। उसे अपने लकी होने की काफी आशा थी।

उसने शर्माते हुए बताया कि वह रेस में हमेशा जीता है।

मैंने पूछा वह कितना लगाता है।

उसने कभी सौ से ज्यादा नहीं लगाया था। उसने कहा कि उसकी समझ में नहीं आता कि वह किस घोड़े पर लगाए। वह वहाँ जाता है... और उसके आगे खड़ा आदमी जिस घोड़े पर दाँव लगाता है, उसी पर वह लगा देता है।

मैंने उसका जन्मदिन पूछा और उसका लकी नंबर बताया। वह खुश हो गया।

उसने मुझसे कहा - आप बुरा न मानें तो एक बात पूछूँ? आपके पति बुरा तो नहीं मानेंगे?

मुझे भार्गव पर लाड़ आने लगा। लगा यह सवाल लेकर उसने काफी माथापच्ची की होगी। इस वक्त वह सहमा-सा मुझे देख रहा था। मैंने कुछ नहीं कहा, बस, जहाँ रूप कुछ देर पहले खड़ा था, वहाँ देखकर चाव से हँस दी। उसे उत्तर की सख्त अपेक्षा थी। मैंने गर्दन से न कर दी।

- तुम्हारी कोई लड़की नहीं? - उसे लेकर मुझे जिज्ञासा हो रही थी।

उसने कहा - मेरी अभी शादी नहीं हुई।

मैं ने अंग्रेजी में कहा - मेरा मतलब लड़की-मित्र से था।

वह और नर्वस हो गया।

थोड़ी देर में संयत होकर उसने बताया कि उसकी माँ ने अब तक उसके लिए दर्जनों रिश्ते नामंजूर कर दिए हैं। वह खूबसूरत-सी लड़की चाहती है, बेशक वह इंटर ही पास हो।

हमारा नंबर इस बार आउट हो गया।

मैं हॉल में रूप को खोजना चाह रही थी। भार्गव भी साथ-साथ देख रहा था। मैंने कहा वह परेशान न हो मैं स्वयं ढूँढ़ लूँगी। मैं हॉल में देखने के बाद सीधे बार में गई। रूप बेतहाशा पी रहा था और उतना ही स्मार्ट लग रहा था जितना तब जब क्लब में घुसा था। हमारे वहाँ जाते ही रूप ने मेरे लिए जिन और उसके लिए व्हिस्की मँगाई। भार्गव डर गया।

मैंने रूप को इशारे से मना किया - भार्गव बहुत पी चुका है, अभी इसे मोटरसाइकिल पर बारह मील जाना है।

भार्गव ने कृतज्ञ आँखों से मुझे देखा। उसने एक बार फिर रूप से सफाई में कुछ कहा।

उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि, कितनी देर में ऑलराइट कह कर चले जाना चाहिए। वह जेब से मोटरसाइकिल की चाबी निकाल कर खेलने लगा।

रूप ने मुझे कोट पहनाना शुरु कर दिया क्योंकि हमारा इतनी देर बाहर रहना काफी साहस की बात थी, यह मानते हुए कि हमारी शादी को सिर्फ पाँच दिन हुए थे!

शीर्ष पर जाएँ

डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

बीमारी

ममता कालिया

टैक्सी की आवाज सुनते ही मैं समझ गई थी कि वे हैं। उन्होंने पैसे चुका कर सामान खींच कर नीचे डाला और ऊपर आ गए। भाई तथा पर्स और हैंडबैग से लदी दिखने वाली उसकी पत्नी। भाई ने अटैची मेज पर टिकाते हुए कहा, कैसी तबियत है? कोई नौकर होगा सामान लाने के लिए?

मैंने कमरे में नजर घुमा कर देखा, नौकर तो नहीं है। वैसे जीना बहुत चौड़ा और नीचा है। भाई जाने लगा उसकी पत्नी मेरे माथे पर हाथ रखते हुए बोली - बड़ा लंबा सफर है, रास्ते में तकलीफ भी बहुत हुई तुम्हारे भाई तो कुछ करते नहीं न। मुसाफिरों से जगह भी मुझे माँगनी पड़ी। मैं मुस्कराई।

भाई होल्डाल घसीट कर लाने में सफल हो गया था, उसने पत्नी से कहा, बस, वह बड़ा ट्रंक ही लाना रहा है न अब? उसकी पत्नी हड़बड़ा कर बोली - उसमें किसी का हाथ न लगवाना, जैसे भी हो धीरे धीरे ले आओ। भाई परेशानी जताता हुआ फिर चल दिया। उसकी पत्नी ने एक हाथ से ब्रेसियर की तनी कसते हुए पूछा, तुमने पुराना मकान क्यों बदल लिया? कितनी दूर है यह स्टेशन से। टैक्सी ही टैक्सी में पैंतीस मिनट लग गए हैं। मैं ने कहा, पहले मकान से ऑफिस पहुँचने के लिए मुझे बस में पचास मिनट लग जाते थे। तुम्हे ट्रेन से आना जाना चाहिए न! उसने कहा।

जब से मैं लोकल ट्रेन से भीड में गिर पड़ी थी, मुझे ट्रेन से नफरत हो गई थी। वैसे भी मुझे लगता था कि तीस सैकेंड का समय गाड़ी में चढ़ने के लिए नाकाफी होता है और लोकल ट्रेन हर स्टेशन पर तीस सैकेंड खडी होती थी।

भाई मोटा काला ट्रंक लिए कमरे में आ गया था। मैं सोचती थी कि इस बार मुझे काफी बड़ा कमरा मिल गया है। पर भाई के सामान के बाद कमरे का फर्श एकदम ढक गया था। अब कमरे में सिर्फ पलँग, दो कुर्सियाँ और सामान नजर आ रहा था। भाई ने बैठ कर कहा - चाय का इंतजाम तो है न? मैंने कहा - हाँ, हाँ, मेरे पास गैस है और बिजली की केतली भी। भाई की पत्नी बोली, तुम कैसे गुजारा करती हो, कम से कम एक नौकर तो रखना चाहिए था।

मैं चुप रही। उन्हें बताना मुश्किल था कि अकेली लड़की की घर के नौकर के साथ क्या-क्या अफवाहें जुड ज़ाती हैं। नौकरानियों से मेरी बहुत जल्द लड़ाई हो जाया करती थी। वे चोर होती थीं और झूठी। आजकल सामने बनती बिल्डिंग का एक चौकीदार आकर चाय के बर्तन माँज जाया करता था और झाड़ू भी लगा देता था। इससे ज्यादा काम के लिए उसमें अक्ल नहीं थी। डॉक्टर ने अब तक दवा भी खुद मँगवा कर दी थी।

भाई की पत्नी अपना बदन सँभालते हुए उठी और रसोई में जा पहुँची। मैंने भाई को आज का अखबार थमा कर आँखें बंद कर लीं। मैं बातों से बहुत थक गई थी। मैं थोड़ी-सी बात करने से ही थक जाती और साँस तेज चलने लगती थी। बल्कि डॉक्टर को मैंने यह बात कह कह कर इतना डरा दिया था कि उसने मुझे कार्डियोग्राम कराने की सलाह दी। कार्डियोलॉजिस्ट की रिर्पोट में ऐसा कुछ डिटेक्ट नहीं हुआ। पर मैं अस्पताल जाकर, कार्डियोग्राम कराने में इतना थक गई कि मुझे कई दिनों तक लगता रहा कि रिर्पोट गलत है।

भाई की पत्नी रसोई से परेशान होती हुई आई और भुनभुनाते स्वर में पति से कहा, मैं सारी रसोई ढूँढ़ चुकी हूँ, न तो चीनी मिलती है, न चाय की पत्ती। मैं ने कहा, सब चीजें पलँग के नीचे रखी हैं। दूध भी? हाँ, उसका डिब्बा भी नीचे ही रखा है। वह फिर रसोई में घुस गई और थोड़ी देर में ट्रे लेकर आई। वह पलँग पर बैठती हुई बोली, लो भई, बना लो अपनी-अपनी, मैं तो बहुत थक गई। भाई ने चाय के प्याले बना बना कर थमाये। मैं ने कहा, मेरे बीमार होने से आपको बहुत तकलीफ हो रही है न? मेरा बदन बिलकुल टूट चुका है, नहीं तो खुद उठती। भाई जल्दी-जल्दी बोला, नहीं-नहीं, यह तो सफर की थकान है, वरना दूसरों को तकलीफ देने की तो इसे जरा भी आदत नहीं है।

भाई ने रैक पर से मेरी एक्सरे की रिर्पोट और ब्लड-यूरिन और स्टूल टेस्ट की रिर्पोटें उठा ली थीं। मैं ने कहा - सिर्फ युरिन रिर्पोट में शिकायत है। उसकी बीबी ने पूछा - शक्कर तो नहीं है? भाई ने कहा, नहीं शक्कर नहीं है, पस है। मैं ने उसकी पत्नी से कहा, रसोई में डबल-रोटी, मक्खन और जैम रखा है। आप चाहें तो ले सकती हैं। उसने कहा, अचार हो तो बता दो। मठरियाँ हैंडबैग में पड़ी हैं। मैंने कहा, मुझे खुद अचार खाए पाँच-एक साल हो गए हैं।

उस दिन मैं सारे समय उसे खाना बनाते और परेशान होते देखती रही। मुझे सिर्फ यह अफसोस हो रहा था कि शादी के बाद से लेकर अब तक वह वैसी ही रही - वैसी ही बेसलीका और बेअक्ल! बल्कि भाई भी उसके साथ साथ उसी अनुपात में बेवकूफ होता जा रहा था। वह उसके साथ रसोई में ऐसे लगा था जैसे कि उसकी पत्नी ऑपरेशन कर रही हो। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि ये लोग मेरा क्या ख्याल रख पाएँगे। मुझे स्वयं पर गुस्सा आ रहा था। भावुकता के एक बचकाने क्षण में मैं ने भाई को बहननुमा चिट्ठी लिख दी थी कि मैं कितनी बीमार और कितनी अकेली हूँ! भाई ने लिखा था कि, यह बहुत अच्छा हुआ कि इस साल मैं ने अपनी कैजुअल खत्म नहीं की। हम लोग आ जाएँगे।

भाई ने अगले दिन बाकी की रिर्पोट ला दीं। किडनी में इनफैक्शन था जिसकी ऑपरेशन वाली स्थिति नहीं आई थी पर लंबा इलाज चलना था। डॉक्टर ने दवाइयों और इंजेक्शनों की लंबी फेहरिस्त लिख दी और बिस्तर में रहने की ताकीद। डॉक्टर ने कहा जैसे जैसे इनफैक्शन दूर होगा, बुखार अपने आप हटता जाएगा। भाई की बीवी ने पूछा, 99 के आगे तो नहीं बढ़ता बुखार। मैं ने कहा नहीं, पिछले 33 दिनों से 99 ही है। उसने कहा, तुम्हारे भाई कहते हैं कि 99 बुखार नहीं होता, हरारत होती है। हम तो इतने बुखार में घर पर खाना बनाते हैं, कपड़े धो लेते हैं। उसे बुखार आ सकता है, यह कल्पना भी मुझे हास्यास्पद लगी। मैं जितनी बार बिस्तर से उठती, मुझे लगता कि कमरे का फर्श और नीचे चला गया है। मुझे आश्चर्य होता था कि कैसे बीमार होते ही मैं सबसे पहले चलना भूल गई।

भाई सुबह-शाम रसोई में पत्नी की मदद करता था। बीच के वक्त में उसे समझ नहीं आता था कि वह क्या करे? मैं उसे अखबार देती तो वह उसे पढ़ने के बजाय ओढ़ कर सो जाया करता। जैसे वह खाने और सोने के लिए ही इतनी दूर से चल कर आया हो। मुझे विश्वास नहीं होता था कि इस आदमी ने कभी दफ्तर की फाइलें भी पढ़ी होंगी।

एक दिन उन लोगों को मैं ने घूमने भेजा था, वे लोग डेढ घंटे के अंदर फिर घर में थे। भाई ने बताया कि वे स्टेशन से चार नंबर बस में बैठ गए थे और उसी बस में बैठे बैठे वापस आ गए थे। उसकी पत्नी ने पूछा, क्या तुम्हारे दफ्तर के लोग तुम्हें देखने भी नहीं आ सकते? मैं ने कहा, जो लोग मुझे जानते हैं, एक एक बार आ चुके हैं। उसने कहा, तुम्हारे भाई तो एक दिन की भी छुट्टी ले लें तो घर में दफ्तरवालों की भीड़ जमा हो जाती है। मैं ने भाई की तरफ देखते हुए कहा, सरकारी दफ्तरों में लोग ऐसे मौके तलाशते ही रहते हैं। पर भाई विरोध के लिए उत्तेजित नहीं हुआ, उस पर पत्नी के हाँफने के सिवा किसी बात का असर नहीं होता था।

बीमारी के शुरु के दिनों में मुझे दफ्तर के पाँच लोग एक साथ देखने आ गए थे, पाँच आदमियों के बैठने की जगह कमरे में नहीं थी। वे सब विवाहित थे, इसीलिए पलँग के किनारे बैठना उनके विचार में अनैतिक था। आखिर उन लोगों ने मेज से दवाइयों की शीशियाँ उठा कर मेज खाली की और दो आदमी उस पर पैर लटका कर बैठ गए। वे सब दफ्तर से सीधे आ गए थे, अपना अपना बैग और छाता उठाए। उन्हें बराबर चाय की तलब होती रही, जिसे वे कमरे की खूबसूरती की बातें कर टालते रहे थे। उन्होंने रेडियो चलाया था और डिसूजा रसोई से सबके लिए पानी लाया था। मुझे बराबर बुरा लगता रहा था कि उन लोगों ने मेरी बीमारी की बाबत पर्याप्त पूछताछ नहीं की। वे आपस में ही बातचीत करते रहे थे। बिस्तर पर पड़े पड़े और डॉक्टर के नुस्खे ले लेकर मुझे अपनी बीमारी खासी महत्वपूर्ण लगने लगी थी। मैं चाहती थी कि विस्तार से बताऊँ कि बीमारी कैसे शुरु हुई और इस बीमारी में सुधार की रफ्तार कितनी धीमी होती है, बावजूद इसके कि अब तक 155 रुपए की दवाइयाँ आ चुकी हैं और 125 रुपए एक्सरे में लग गए।

भाई की छुट्टियाँ खत्म होने वाली थीं और वह हर बार डॉक्टर से यह जान लेना चाहता था कि मैं पूरी तरह ठीक कब तक होऊँगी। वह मेरी बीमारी के प्रति काफी जिम्मेदारी महसूस कर रहा था। उसने कहा, अच्छा हो, तुम हमारे ही साथ अहमदाबाद चलो। वहाँ इसके साथ तुम्हारा मन भी लग जाएगा। वह अपनी बीवी को हमेशा सर्वनाम से ही संबोधित करता था। मैं ने कहा, मन लगना मेरे लिए कोई समस्या नहीं। और सफर के लायक ताकत मेरे अंदर है भी नहीं। वास्तव में मैं उसकी पत्नी के साथ मन लगाने के सुझाव से ही घबरा गई थी। मुझे यह भी पता था कि मेरी इस बीमारी को वह संदिग्ध समझ रही है, उसके ख्याल में कुँआरेपन में किसी भी प्रकार का इनफैक्शन होना चाहे किडनी ही में सही सरासर दुश्चरित्र होने की निशानी थी। एक वह मुझे सोता समझ यह बात अपने पति से कह रही थी। भाई की अपनी समझ शायद ऐसे मौकों पर काम नहीं करती थी, वह चुप ही रहा करता था।

भाई को अचानक एक मौलिक विचार आया, उसने कहा, सुनो, ऐसी तकलीफ में अस्पताल अच्छा रहता है, बल्कि तुम्हें बहुत पहले अस्पताल चले जाना चाहिए था। यहाँ कोई टहल-फिक्र करने वाला भी तो नहीं है। मैंने कहा, हाँ, अस्पताल में काफी आराम मिलता है। भाई ऐसे कामों में खूब मुस्तैद था, उसने तीन घंटे बेतहाशा दौड़धूप की और शाम को पसीना पोंछते हुए सफल आदमी की तरह घर लौटा, उसकी पत्नी, उसकी कामयाबी से प्रसन्न होकर फौरन चाय बनाने रसोई में चली गई।

मैंने अलमारी से कुछ कपड़े और जरूरी चीजें निकाली और भाई की पत्नी से कहा कि वह अटैची में रख दे। भाई मेरे सारे डॉक्टरी कागज बटोर रहा था। बिस्तर पर लेटे लेटे मैंने देखा कि उसकी पत्नी कपड़ों के बीच बैठी मेरी ब्रेजियर का नंबर पढ़ने की कोशिश कर रही थी। मैंने भाई से पूछा, तुम्हारे अपने पैसे तो नहीं लगे किसी चीज में! भाई ने झेंपते हुए अपनी जेब से पर्स निकाला और कई कागज उलट पुलट कर एक कागज मुझे थमा दिया। उसमें

उन पैसों का हिसाब था, जो इधर उधर मेरे सिलसिले में आने जाने में खर्च हुए थे और जो फल मेरे लिए लाए गए थे।

मैंने भाई से कहा, कैश मैं अपने पास ही रख रही हूँ, जरूरत पड़ सकती है, तुम चैक ले लोगे? उसकी पत्नी ने तुरंत सिर हिला दिया, हाँ, हाँ बैंक एकाउंट है इनका। मैंने एक चैक अस्पताल के नाम काट कर पर्स में रखा और एक भाई को थमाया। फिर मैं टैक्सी का इंतजार करने लगी।

शीर्ष पर जाएँ

बोलनेवाली औरत

–ममता कालिया

''यह झाड़ू सीधी किसने खड़ी की?'' बीजी ने त्योरी चढ़ाकर विकट मुद्रा में पूछा। जवाब न मिलने पर उन्होंने मीरा को धमकाया, ''इस तरह फिर कभी झाड़ू की तो...''

वे कहना चाहती थीं कि मीरा को काम से निकाल देंगी पर उन्हें पता था नौकरानी कितनी मुश्किल से मिलती है। फिर मीरा तो वैसे भी हमेशा छोड़ू-छोड़ूँ मुद्रा में रहती थी।

''मैंने नहीं रखी'', मीरा ने ऐंठकर जवाब दिया।

''क्यों रखी थी!'' तुझे इतना नहीं मालूम कि झाड़ू खड़ी रखने से घर में दलिद्दर आता है, कर्ज बढ़ता है, रोग जड़ पकड़ लेता है।''

''यह तो मैंने कभी नहीं सुना।''

''जाने कौन गाँव की है तू। माँ के घर से कुछ भी तो सीखकर नहीं आई। काके का काम वैसे ही ढीला चल रहा है, तू और झाड़ू खड़ी रख, यही सीख है तेरी!''

''मेरा ख्याल है झाड़ू गुसलखाने के बीचोबीच भीगती हुई, पसरी हुई छोड़ देने से दलिद्दर आ सकता है। तीलियाँ गल जाती हैं, रस्सी ढीली पड़ जाती है और गन्दी भी कितनी लगती है।''

''आज तो मैंने माफ कर दिया, फिर भी कभी झाड़ू खड़ी न मिले, समझी!''

''इस बात में कोई तुक नहीं है बीजी, झाड़ू कैसे भी रखी जा सकती है।''

बीजी झुँझला गई। कैसी जाहिल और जिद्दी लड़की ले आया है काका। लाख बार

कहा था इस कुदेसिन से ब्याह न कर, पर नहीं, उसके सिर पर तो भूत सवार था।

शिखा को हँसी आ गई। बीजी अपने को बहुत सही और समझदार मानती हैं, जबकि अकसर उनकी बातों में कोई तर्क नहीं होता।

उसे हँसते देखकर बीजी का खून खौला गया।

''इसे तो बिल्कुल अकल नहीं'', उन्होंने मीरा से कहा।

''बीजी चाय पिएँगी?'' शिखा ने पूछा।

बीजी उसकी तरफ पीठ करके बैठी रहीं। शिखा की बात का जवाब देना वे जरूरी नहीं समझतीं। वैसे भी उनका ख्याल था कि शिखा के स्वर में खुशामद की कमी रहती है।

शिखा ने चाय का गिलास उनके आगे रखा तो वे भड़क गईं, ''वैसे ही मेरा कब्ज के मारे बुरा हाल है, तू चाय पिला-पिलाकर मुझे मार डालना चाहती है।''

शिखा ने और बहस करना स्थगित किया और चाय का गिलास लेकर कमरे में चली गई।

शिखा का शौहर, कपिल अपने घरवालों से इन अर्थों से भिन्न था कि आमतौर पर उसका सोचने का एक मौलिक तरीका था। शादी के ख्याल से जब उसने अपने आस-पास देखा, तो कॉलेज में उसे अपने से दो साल जूनियर बी.एससी. में पढ़ती शिखा अच्छी लगी थी। सबसे पहली बात यह थी कि वह उन सब औरतों से एकदम अलग थी जो उसने परिवार और अपने परिवेश में देखी थीं। शिखा का पूरा नाम दीपशिखा था लेकिन कोई नाम पूछता तो वह महज नाम नहीं बताती, ''मेरे माता-पिता ने मेरा नाम गलत रखा है। मैं दीपशिखा नहीं, अग्निशिखा हूँ।'' वह कहती।

अग्निशिखा की तरह ही वह हमेशा प्रज्वलित रहती, कभी किसी बात पर, कभी किसी सवाल पर। तब उसकी तेजी देखने लायक होती। उसकी वक्तृता से प्रभावित होकर कपिल ने सोचा वह शिखा को पाकर रहेगा। पढ़ाई के साथ-साथ वह पिता के व्यवसाय में भी लगा था, इसलिए शादी से पहले नौकरी ढूँढ़ने की उसे कोई जरूरत नहीं थी। बिना किसी आडंबर, दहेज या नखरे के एक सादे समारोह में वे विवाह-सूत्र में बँध गए। शिखा उसकी आत्मनिर्भरता, खूबसूरती और स्वतंत्र सोच से प्रभावित हुई। तब उसे यह नहीं पता था कि प्रेम और विवाह दो अलग-अलग संसार हैं। एक में भावना और दसूरे में व्यवहार की जरूरत होती है। दुनिया भर में विवाहित

औरतों का केवल एक स्वरूप होता है। उन्हें सहमति-प्रधान जीवन जीना होता है। अपने घर की कारा में वे कैद रहती हैं। हर एक की दिनचर्या में अपनी-अपनी तरह का समरसता रहती है। हरेक के चेहरे पर अपनी-अपनी तरह की ऊब। हर घर का एक ढर्रा है जिसमें आपको फिट होना है। कुछ औरतें इस ऊब पर शृंगार का मुलम्मा चढ़ा लेती हैं पर उनके शृंगार में भी एकरसता होती है। शिखा अन्दाज लगाती, सामने वाले घर की नीता ने आज कौन-सी साड़ी पहनी होगी और प्रायः उसका अन्दाज ठीक निकलता। यही हाल लिपिस्टक के रंग और बालों के स्टाइल का था। दुःख की बात यही थी कि अधिकांश औरतों को इस ऊब और कैद की कोई चेतना नहीं थी। वे रोज सुबह साढ़े नौ बजे सासों, नौकरों, नौकरानियों, बच्चों, माली और कुत्तों के साथ घरों में छोड़ दी जातीं, अपना दिन तमाम करने के लिए। वही लंच पर पति का इन्तजार, टी.वी. पर बेमतलब कार्यक्रमों का देखना और घर-भर के नाश्ते, खाने- नखरों की नोक पलक सँवारना। चिकनी महिला पत्रिकाओं के पन्ने पलटना, दोपहर को सोना, सजे हुए घर को कुछ और सजाना, सास की जी-हुजूरी करना और अन्त में रात को एक जड़ नींद में लुढ़क जाना।

कपिल के घर आते ही बीजी ने उसके सामने शिकायत दर्ज की, ''तेरी बीवी तो अपने को बड़ी चतुर समझती है। अपने आगे किसी की चलने नहीं देती। खड़ी-खड़ी जबाब टिकाती है।''

कपिल को गुस्सा आया। शिखा को एक अच्छी पत्नी की तरह चुप रहना चाहिए, खासतौर पर माँ के आगे। इसने घर को कॉलेज का डिबेटिंग मंच समझ रखा है और माँ को प्रतिपक्ष का वक्ता। उसने कहा, ''मैं उसे समझा दूँगा, आगे से बहस नहीं करेगी।''

''उलटी खोपड़ी की है बिल्कुल। वह समझ ही नहीं सकती'' माँ ने मुँह बिचकाया।

रात, उसने कमरे में शिखा से कहा, ''तुम माँ से क्यों उलझती रहती हो दिन-भर!''

''इस बात का विलोम भी उतना ही सच है।''

''हम विलोम-अनुलोम में बात नहीं कर रहे हैं, एक सम्बन्ध है जिसकी इज्जत तुम्हें करनी होगी।''

''गलत बातों की भी!''

''माँ की कोई बात गलत नहीं होती।''

''कोई भी इंसान परफेक्ट नहीं हो सकता।''

कपिल तैश में आ गया, ''तुमने माँ को इम्परफेक्ट कहा। तुम्हें शर्म आनी चाहिए। तुम हमेशा ज्यादा बोल जाती हो और गलत भी।''

''तुम मेरी आवाज बन्द करना चाहते हो।''

''मैं एक शान्त और सुरुचिपूर्ण जीवन जीना चाहता हूँ।''

शिखा अन्दर तक जल गई इस उत्तर से क्योंकि यह उत्तर हजार नए प्रश्नों को जन्म दे रहा था। उसने प्रश्नों को होठों के क्लिप से दबाया और सोचा, अब वह बिल्कुल नहीं बोलेगी, यहाँ तक कि ये सब उसकी आवाज को तरस जायेंगे।

लेकिन यह निश्चय उससे निभ न पाता। बहुत जल्द कोई-न-कोई ऐसा प्रसंग उपस्थित हो जाता कि ज्वालामुखी की तरह फट पड़ती और एक बार फिर बदतमीज और बदजुबान कहलाई जाती। तब शिखा बेहद तनाव में आ जाती। उसे लगता घर में जैसे टॉयलेट होता है ऐसे एक टॉकलेट भी होना चाहिये जहाँ खड़े होकर वह अपना गुबार निकला ले, जंजीर खींचकर बातें बहा दे और एक सभ्य शान्त मुद्रा से बाहर आ जाये। उसे यह भी बड़ा अजीब लगता है कि वह लगातार ऐसे लोगों से मुखातिब है जिन्हें इसके इस भारी-भरकम शब्दकोश की जरूरत ही नहीं है। घर को सुचारू रूप से चलाने के लिए सिर्फ दो शब्दों की दरकार थी-जी और हाँजी।

''कल छोले बनेंगे?''

''जी छोले बनेंगे।''

''पाजामों के नाड़ें बदले जाने चाहिए। ''

''हाँ जी, पाजामों के नाड़े बदले जाने चाहिए।''

उसने अपने जैसी कई स्त्रियों से बात करके देखा, सबमें अपने घरबार के लिए बेहद सन्तोष और गर्व था।

''हमारे तो ये ऐसे हैं।'' ''हमारे तो ये वैसे हैं जैसा कोई नहीं हो सकता।''

''हमारे बच्चे तो बिल्कुल लव-कुश की जोड़ी है।'' ''हमारा बेटा तो पढ़ने में इतना तेज है कि पूछो ही मत।'' शिखा को लगता उसी में शायद कोई कमी है जो वह इस तरह सन्तोष में लबालब भरकर ''मेरा परिवार महान'' के राग नहीं अलाप सकती।

रातों को बिस्तर में पड़े-पड़े वह देर तक सोती नहीं, सोचती रहती, उसकी

नियति क्या है। न जाने कब कैसे एक फुलटाइम गृहिणी बनती गई जबकि उसने ज़िन्दगी की एक बिल्कुल अगल तस्वीर देखी थी। कितना अजीब होता है कि दो लोग बिल्कुल अनोखे, अकेले अन्दाज में इसलिए जनदीक आयें कि वे एक-दूसरे की मौलिकता की कद्र करते हों, महज इसलिए टकराएँ क्योंकि अब उन्हें मौलिकता बरदाश्त नहीं।

दरअसल वे दोनों अपने-अपने खलनायक के हाथों मार खा रहे थे। यह खलनायक था रूटीन जो जीवन की खूबसूरती को दीमक की तरह चाट रहा था। कपिल चाहता था कि शिखा एक अनुकूल पत्नी की तरह रूटीन का बड़ा हिस्सा अपने ऊपर ओढ़ ले और उसे अपने मौलिक सोच-विचार के लिए स्वतन्त्र छोड़ दे। शिखा की भी यही उम्मीद थी। उनकी जिन्दगी का रूटीन या ढर्रा उनसे कहीं ज्यादा शक्तिशाली था। अलस्सुबह वह कॉलबेल की पहली कर्कश ध्वनि के साथ जग जाता और रात बारह के टन-टन घंटे के साथ सोता। बीजी घर में इस रूटीन की चौकीदार तैनात थीं। घर की दिनचर्या में जरा-सी भी देर-सबेर उन्हें बर्दाश्त नहीं थी। शिखा जैसे-तैसे रोज के काम निपटाती और जब समस्त घर सो जाता, हाथ-मुँह धो, कपड़े बदल एक बार फिर अपना दिन शुरू करने की कोशिश करती। उसे सोने में काफी देर हो जाती और अगली सुबह उठने में भी। उसके सभी आगमी काम थोड़े पिछड़ जाते। बीजी का हिदायतनामा शुरू हो जाता, ''यह आधी-आधी रात तक बत्ती जलाकर क्या करती रहती है तू। ऐसे कहीं घर चलता है!'' ससुर 194 में सीखा हुआ मुहाबरा टिका देते, ''अर्ली टु बेड एंड अर्ली टु राइज बगैरह-बगैरह।'' हिदायतें सही होतीं पर शिखा को बुरी लगतीं। वह बेमन से झाड़ू-झाड़न पोचे का रोजनामचा हाथ में उठा लेती जबकि उसका दिमाग किताब, कागज और कलम की माँग करता रहता। कभी-कभी छुट्टी के दिन कपिल घर के कामों में उसकी मदद करता। बीजी उसे टोक देंती, ''ये औरतों वाले काम करता तू अच्छा लगता है। तू तो बिल्कुल जोरू का गुलाम हो गया है।''

घर में एक सहज और सघन सम्बन्ध को लगातार ठोंक-पीठकर यान्त्रिक बनाया जा रहा था। एकान्त में जो भी तन्मयता पति-पत्नी के बीच जन्म लेती, दिन के उजाले में उसकी गर्दन मरोड़ दी जाती। बीजी को सन्तोष था कि वे परिवार का संचालन बढ़िया कर रही हैं। वे बेटे से कहतीं,''तू फिकर मत कर। थोड़े दिनों में मैं इसे ऐन पटरी पर ले आऊंगी।''

पटरी पर शिखा तब भी नहीं आई अब दो बच्ची की माँ हो गई। बस इतना भर हुआ

कि उसने अपने सभी सवालों का रुख अन्य लोगों से हटाकर कपिल और बच्चों की तरफ कर लिया। बच्चे अभी कई सवालों को जवाब देने लायक समझदार नहीं हुए थे, बल्कि लाड़-प्यार में दोनों के अन्दर एक तर्कातीत तुनकमिजाजी आ बैठी थी। स्कूल से आकर वे दिन-भर वीडियो देखते, गाने-सुनते, आपस में मार-पीट करते और जैसे-तैसे अपना होमवर्क पार लगाकर सो जाते। कपिल अपने व्यवसाय से बचा हुआ समय अखबारों, पत्रिकाओं और दोस्तों में बिताता। अकेली शिखा घर की कारा में कैद घटनाहीन दिन बिताती रहती। वह जीवन के पिछले दस सालों और अगले बीस सालों पर नजर डालती और घबरा जाती। क्या उसे वापस अग्नि शिखा की बजाय दीपशिखा बनकर ही रहना होगा, मद्धिम और मधुर-मधुर जलना होगा। वह क्या करे अगर उसके अन्दर तेल की जगह लावा भरा पड़ा है।

उसे रोज लगता कि उन्हें अपना जीवन नये सिरे से शुरू करना चाहिये। इसी उद्देश्य से उसने कपिल से कहा, ''क्यों नहीं हम दो-चार दिन को कहीं घूमने चलें।''

''कहाँ?''

''कहीं भी। जैसे जयपुर या आगरा।''

''वहाँ हमें कौन जानता है। फिजूल में एक नई जगह जाकर फँसना।''

''वहाँ देखने को बहुत कुछ है। हम घूमेंगे, कुछ नई और नायाब चीज़ें खरीदेंगे, देखना, एकदम फ्रेश हो जायेंगे।''

''ऐसी सब चीजें यहाँ भी मिलती हैं, सारी दुनिया का दर्शन जब टी.वी. पर हो जाता है तो वहाँ जाने में क्या तुक है?''

''तुक के सहारे दिन कब तक बितायेंगे?''

बच्चों ने इस बात का मजाक बना लिया ''कल को तुम कहोगी, अंडमान चलो, घूमेंगे।''

''इसका मतलब अब हम कहीं नहीं जायेंगे, यहीं पड़े-पड़े एक दिन दरख्त बन जायेंगे।''

''तुम अपने दिमाग का इलाज कराओ, मुझे लगता है तुम्हारे हॉरमोन बदल रहे हैं।''

''मुझे लगता है, तुम्हारे भी हॉरमोन बदल रहे हैं।''

''तुम्हारे अन्दर बराबरी का बोलना एक रोग बनता जा रहा है। इन ऊलजलूल

बातों में क्या रखा है?''

शिखा याद करती वे प्यार के दिन जब उसकी कोई बात बेतुकी नहीं थी। एक इंसान को प्रेमी की तरह जानना और पति की तरह पाना कितना अलग था। जिसे उसने निराला समझा वहीं कितना औसत निकला। वह नहीं चाहता जीवन के ढर्रे में कोई नयापन या प्रयोग। उसे एक परंपरा चाहिए जी-हुजूरी की। उसे एक गाँधारी चाहिए जो जानबूझकर न सिर्फ अन्धी हो बल्कि गूँगी और बहरी भी।

बच्चों ने बात दादी तक पहुँचा दी। बीजी एकदम भड़क गईं, ''अपना काम-धन्धा छोड़ कर काका जयपुर जायेगा, क्यों, बीवी को सैर कराने। एक हम थे, कभी घर से बाहर पैर नहीं रखा।''

''और अब जो आप तीर्थ के बहाने घूमने जाती हैं वह?'' शिखा से नहीं रहा गया

''तीरथ को तू घूमना कहती है! इतनी खराब जुबान पाई है तूने, कैसे गुजारा होगा तेरी गृहस्थी का!''

''काश गोदरेज कम्पनी का कोई ताला होता मुँह पर लगानेवाला, तो ये लोग उसे मेरे मुँह पर जड़कर चाबी सेफ में डाल देते'', शिखा ने सोचा, ''सच ऐसे कब तक चलेगा जीवन।''

बच्चे शहजादों की तरह बर्ताव करते। नाश्ता करने के बाद जूठी प्लेटें कमरे में पड़ी रहतीं मेज पर। शिखा चिल्लाती, ''यहाँ कोई रूम सर्विस नहीं चल रही है, जाओ, अपने जूठे बर्तन रसोई में रखकर आओ।''

''नहीं रखेंगे, क्या कर लोगी'', बड़ा बेटा हिमाकत से कहता।

न चाहते हुए भी शिखा मार बैठती उसे।

एक दिन बेटे ने पलटकर उसे मार दिया। हल्के हाथ से नहीं, भरपूर घूँसा मुँह पर। होठ के अन्दर एक तरफ का मांस बिलकुल चिथड़ा हो गया। शिखा सन्न रह गई। न केवल उसके शब्द बन्द हो गए, जबड़ा भी जाम हो गया। बर्तन बेटे ने फिर भी नहीं उठाये, वे दोपहर तक कमरे में पड़े रहे। घर भर में किसी ने बेटे को गलत नहीं कहा।

बीजी एक दर्शक की तरह वारदात देखती रहीं। उन्होंने कहा, ''हमेशा गलत बात बोलती हो, इसी से दूसरे का खून खौलता है। शुरू से जैसी तूने ट्रेनिंग दी, वैसा वह बना है। ये तो बचपन से सिखानेवाली बातें हैं। फिर तू बर्तन उठा देती तो क्या घिस जाता।''

उन्हीं के शब्द शिखा के मुँह से निकल गए, ''अगर ये रख देता तो इसका क्या घिस जाता।''

''बदतमीज कहीं की, बड़ों से बात करने की अकल नहीं है।'' बीजी ने कहा।

ससुर ने सारी घटना सुनकर फिर 194 का एक मुहावरा टिका दिया, ''एज यू सो, सो शैल यू रीप''

कपिल ने कहा, ''पहले सिर्फ मुझे सताती थीं, अब बच्चों का भी शिकार कर रही हो।''

''शिकार तो मैं हूं, तुम सब शिकारी हो'', शिखा कहना चाहती थी पर जबड़ा एकदम जाम था। होंठ अब तक सूज गया था। शिखा ने पाया, परिवार में परिवार की शर्तों पर रहते-रहते न सिर्फ वह अपनी शक्ल खो बैठी है वरन् अभिव्यक्ति भी। उसे लगा वह ठूँस ले अपने मुँह में कपड़ा या सी डाले इसे लोहे के तार से। उसके शरीर से कहीं कोई आवाज न निकले। बस, उसके हाथ-पाँव परिवार के काम आते रहें। न निकलें इस वक्त मुँह से बोल लेकिन शब्द उसके अन्दर खलबलाते रहेंगे। घर के लोग उसके समस्त रन्ध्र बन्द कर दें फिर भी ये शब्द अन्दर पड़े रहेंगे, खौलते और खदकते। जब मृत्यु के बाद उसकी चीर-फाड़ होगी, तो ये शब्द निकल भागेंगे शरीर से और जीती-जागती इबारत बन जायेंगे। उसके फेफड़ों से, गले की नली से, अँतड़ियों से चिपके हुए ये शब्द बाहर आकर तीखे, नुकीले, कँटीले, जहरीले असहमति के अग्रलेख बनकर छा जायेंगे घर भर पर। अगर वह इन्हें लिख दे तो एक बहुत तेज एसिड का आविष्कार हो जाये। फिलहाल उसका मुँह सूजा हुआ है, पर मुँह बन्द रखना चुप रहने की शर्त नहीं है। ये शब्द उसकी लड़ाई लड़ते रहेंगे।

ममता कालिया

जन्म : 2 नवंबर, 194, वृन्दावन

प्रमुख कृतियाँ : छुटकारा, एक अदद औरत, सीट नं. 6, बोलने वाली औरत (कहानी संग्रह) बेघर, लड़कियाँ, नरक-दर-नरक, दौड़ (उपन्यास) कितने शहरों में कितनी बार (संस्मरण)

डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

मेला

ममता कालिया

मकर संक्रांति से एक दिन पूर्व पहुँच गईं चरनी मासी। पहले कभी उसके घर आई नहीं थीं। पर उन्होंने पता ठिकाना ढूँढ निकाला। अंकल चिप्स की छोटी-सी डायरी में उनके पोते के हाथ की टेढी-मेढी लिखावट में दर्ज था 'सत्य प्रकाश' २२७ मालवीय नगर इलाहाबाद। उनके साथ चमडे का एक बडा-सा थैला, बिस्तरबंद और कनस्तर उतरा। और उतरीं उन जैसी ही गोलमटोल उनकी सत्संगिन, प्रसन्नी।

स्टेशन से चौक के, रिक्शे वाले ने माँगे चार, मासी ने दे डाले पाँच रुपए। तीरथ पर आई हैं, किसी का दिल दुखी न हो। पुन्न कमा लें। इतनी ठंड में दो सवारी खींच कर लाया है रिक्शेवाला।

चाय पानी के बाद उनके लिए कमरे का एक कोना ठीक किया गया तो बोली 'रहने दे घन्टे भर बाद स्वामी जी के आश्रम में जाना है।'

सत्य ने कहा, "थोडे दिन घर में रह लो मासी, वहाँ बड़ी ठंड है।"

"तीरथ करने निकली हैं, गृहस्थ विच नहीं रहना।"

"अच्छा मासी यह बताओ आप तीरथ पर क्यों निकली हो?"

"ले मैं क्या पहली बार निकली हूँ। सारे तीरथ कर डाले मैंने-हरद्वार, ऋषिकेश, बद्रीनाथ, केदारनाथ, पुष्करजी, गयाजी, नासिक, उज्जैन। बस प्रयाग का यह कुम्भ रह गया था,वह भी पूरन हो जाएगा।"

"मासी आप इतने तीरथ क्यों करतीं हो?"

"ले पाप जो धोने हुए।"

भानजे की आँखों में शरारत चमकी, "कौन से पाप आपने ने किए हैं?' सत्ते (सत्य प्रकाश) मासी से सिर्फ़ छह साल छोटा था। नानके में उसका बचपन इसी मासी को छकाते,खिझाते बीता था।

चरनी मासी हँस पडीं, एकदम स्वच्छ दाँतों वाली भोली-भाली निष्पाप हँसी। जब वे निरुत्तर होने लगती हैं तो स्वामी जी की भाषा बोलने लगती हैं, "पाप सिर्फ़ वही नहीं होता जो जानकर किया जाय। अनजाने भी पाप हो जाता है, उसी को धोने।"

अनजाने पाप में उनके स्वामी जी के अनुसार बुरा बोलना, बुरा देखना, बुरा सुनना जैसे गांधीवादी निषेध हैं।

सत्ते की पत्नी चारू साइंस की टीचर है। उसने कहा, "मासी आप से भी तो लोग अनजाने में कभी बुरा बोले होंगे। जैसे जीरो से जीरो कट जाता है, पाप से पाप नहीं कट सकता क्या?"

"पाप से पाप और मैल ने मैल नहीं कटता। पाप की काट पुण्य है, जैसे मैल की काट साबुन।"

"मलमल धोऊँ दाग नहीं छूटे" जैसे भजन के बारे में आप क्या सोचती हैं?"

"छोटे मोटे तीरथ पर यह मुश्किल आती होगी, प्रयाग का महाकुम्भ तो संसार में अनोखा है। तुम गरम पानी से नहाने वाले क्या जानो।" मासी ने आर्या दी हट्टी के लड्डुओं का पैकेट पीपे में से निकाला और चारू के हाथ में दिया और कहा,

"तीरथ अमित कोटि सम पावन।

नाम अखिल अध नसावन।"

चारु सोचने लगी 'दसियों बरस तो मैं इन्हें जानती हूँ, जगत मासी हैं ये। हर एक के दुख में कातर, सुख में शामिल! न किसी से बैर न द्वेष, पडोस में सबसे बोलचाल,रिश्तेदारों में मिलनसार, परिवार में आदरणीय, यहाँ तक कि बहुएँ भी कभी इनकी आलोचना नहीं करतीं। ऐसी प्यारी चरनी मासी कुम्भ पर कौन से पाप धोने आई हैं कि घर की सुविधा छोड वहाँ खुले में रहेंगी।"

पर मासी नहीं मानी। सूरज डूबने से पहले चली गईं।

पेशे से पत्रकार है सत्ते मगर दोस्तियाँ उसकी हर महकमें में है। इसलिए जब एस.पी. कुम्भ ने कहा, "कवरेज" आपके रिपोर्टर करते रहेंगे, एक दिन खुद आकर छटा तो देख जाएँ तो सबकी बाँछें खिल गईं। अभी मेला क्षेत्र में प्रवेश भी नहीं किया था सत्या और चारू ने कि मेले का समां नजर आने लगा। सोहबतिया बाग से संगम जाने वाले मार्ग पर भगवे रंग की एम्बैसडर गाडियाँ दौड रहीं थीं। पाँच सितारा आध्यात्म पेश करने वाले, विशाल जटाजूट धारण किए साधू संत, फकीर रंग बिरंगे यात्रियों के रेले में अलग नज़र आ रहे थे। दूर से संगम तट पर असंख्य बाँस बल्ली के चंदोवे तने हुए थे। कहीं रजाई में बैठे हुए भी ठिठुर रहे थे लोग, कहीं मेले में ठंडे कपडो में बूढे, जवान, अधेड स्त्री पुरुष और बच्चे एक धुन में चले जा रहे थे। सबसे अच्छा दृश्य था किसी टोले का सड़क पार करने का उपक्रम। सब एक दूसरे की धोती कुरते का छोर पकड़ कर रेलगाडी के डिब्बों की तरह चल रहे थे।

ठीक ११ साल ८६ दिन बाद पड़ा है यह महाकुम्भ। शहर इलाहाबाद। अनेकानेक यज्ञ की पावन भूमि पूर्ण कुम्भ के माहाम्य से महिमा मंडित है। इस अवधि का हर दिन भक्ति,ध्यान और स्नान के लिए शुभ है। यों तो यात्री पूरे साल आते हैं पर इस माह यहाँ रिकार्ड तोड़ भीड़ है। सर्वाधिक चहल-पहल के स्थल हैं संगम-तट, भारद्वाज आश्रम, अमृतवट और अक्षयवट। लगता है वेद, पुराण, आख्यान, तीनों आप चलकर समीप आए हैं। अदभुत मेला है यह। इतने वर्ष बाद आता है। न जाने कहाँ-कहाँ से इसमें भीड़ जुट जाती है। न कोई किसी को निमन्त्रण भेजता है न बुलावा। बस लोग हैं कि उमड़े चले आते हैं।

स्नान करना हो तो बाजरा मँगवाया जाय, कप्तान साहब ने पूछा। सत्य हँस दिया। उसकी इन बातों में कोई आस्था नहीं।

"हमारा इरादा तो आज घर पर भी नहाने का नहीं था।" उसने कहा।

"मैं सुबह ही नहा चुकी हूँ।" चारू ने सफाई दी।

मेले में मकर संक्रान्ति पर कितने नहाए इस बात पर अधिकारियों में बहस है। प्रेस और पुलिस के अलग-अलग आँकड़े हैं। अखबार में छपा है तेरह लाख तो पुलिस का दावा है छब्बीस लाख। शाम को रेडियो ने कहा दस लाख के ऊपर नहाए हैं।

प्रशासन के अफसर कूद-कूद कर आँकडे सप्लाई कर रहे हैं। पत्रकार नाम का जीव देखते ही पत्रकारिता वाला गंगाजल मँगवाते हैं, "अरे द्विवेदी जी आप अब आ रहे हो, भीड तो भोर से नहा रही है। क्या कहा, पच्चीस, अजी पैंतीस तो दुई घन्टे पहले नहा चुके थे।"

दरअसल स्नानार्थियों की घोषित संख्या से ही सरकारी बजट में डाइव मारने की गुंजाइश निकलेगी।

द्विवेदीजी अपनी बंदर टोपी में से सवाल फेंकते हैं 'डूबे कितने?' कप्तान साहब के पीछे कई मातहत खडे हैं, "एक भी नहीं। एक भी नहीं।" सब कोरस में कहते हैं।

"ऐसा कैसे हो सकता है?"

"चार केस हुए थे, चारों को बचा लिया। एक को भी डूबने नहीं दिया गया।"

'कौमी एकता' के रिपोर्टर ने कहा, "दीन मुहम्मद तो कह रहा था, वहाँ झूंसी के कटान के पास सात लाशें निकाली गईं आज।"

"जब आप मूँगफली वाले से डिटेल लेंगे तो यही होगा। वह तैराक को लाश बताएगा और लाश को कंकाल।"

कुल मिलाकर प्रेस को आभास मिल जाता है कि प्रशासन के अधिकारियों में अद्भुत तालमेल है। प्रशासन मुदित है। ऐसा मलाई-बजट प्रस्तुत किया है केन्द्र और प्रदेश सरकार ने कि कई पीढ़ियों का महाकुम्भ हो गया, तार दिया गंगा मैया ने। बीवी-बच्चे, रिश्तेदार, पड़ोसी सबको खुश कर दिया। मातहतों के मुँह भी हरे हो गए। बरसों के सूखे पेड़ों की सिंचाई हुई है इस बरस। गाड़ियों का काफिला पुलिस और प्रशासन की छोलदारियों में झूम रहा है सफेद हाथियों सा। जब गाड़ी सरकारी हो, ड्राइवर सरकारी हो, पेट्रोल सरकारी हो और सवारी निजी हो फिर न पूछिए मस्ती, सर्दी में भी गरमी लगती है, दिल से एक ही आवाज़ निकलती है जय माँ गंगे, जय माँ गंगे।

संगम-स्थल आज वहाँ नहीं है जहाँ पहले था। गंगा ने विशाल भू क्षेत्र को छोड दिया है। आजकल संगम पर जल टकराने की वह ध्वनि तो सुनाई नहीं देती जो भगवान राम ने प्रयाग आने पर सुनी थी, 'सरिता द्वय जल टकराने का नाद सुनो, दे रहा सुनाई।' लेकिन श्वेत-श्याम धारा का मिलन एक रोमांचकारी अनुभूति देता है। जितनी देर जल की ओर देखें मन, जीवन के रहस्यवाद का अन्वेषण करता है। नदी के विस्फारित नेत्रों जैसी नावें चली जा रहीं हैं, यात्रियों को लाती, ले जाती। कभी उनकी मचान या लकडी के फ्रेम पर खिरगल बैठ जाती है, जलपाखी।

यात्री पानी में आटे की गोलियाँ और लाई डालते हैं। खिरगल कई बार हवा में लाई लपक लेती है। उनकी भगवा चोंच और पंजे देखकर लगता है या तो वे सन्यासी हो गई है या भाजपा की सदस्य।

कुम्भ क्षेत्र में साधुओं की भी त्रिपथगा है, सच्चे, पाखंडी और मक्कार। यहाँ धर्म, आस्था और आडम्बर का संगम चल रहा है। हर चीज यहाँ तीन के पहाडे में है जैसे त्रिवेणी से ही सीखा है यह। होमगार्ड, पुलिस, पी ए सी, गुरू, गोविन्द और शिव भक्त, बगुलाभक्त, और अंधभक्त।

मासी की ऐनक टूट गई। सत्ते ने कहा, "चल कर मासी को ले आते हैं। ऐनक बनने के साथ साथ वे दो दिन घर में रिलैक्स भी कर लेंगी।" गलन, हवा और धूल को चुनौती देता मेला पहले से भी ज्यादा गुलजार हो गया था। मौनी अमावस्या दो रोज बाद थी पर यात्रियों के रेले अभी से आने शुरू हो गए थे। ज्यादा स्त्रियाँ, बूढ़ी, अधेड़ और जवान। अनुपात में पुरुष कुछ कम। वे सारे के सारे महीनें टिकते भी नहीं हैं, एक दो प्रमुख स्नान दिनों का लाभ उठाकर लौट जाते हैं, वापस दुनिया की ठेकेदारी में। अपने निजी पाप पुण्य का गठ्टर अपनी स्त्रियों को थमा कर वे चल देते हैं। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि एक दो डुबकी लगाने से उनके समस्त पाप धुल गए।

काली सड़क के किनारे-किनारे यात्री एकदम खुले आसमान के नीचे पड़े थे, अपने कम्बलों में गुड़ी-मुड़ी हुए। सामान के नाम पर एक बोरा, एक-एक कम्बल। जगह-जगह शिविरों में कीर्तन, प्रवचन चल रहा था। पंडालों में भारी भीड। जिनको ज्यादा ठंड लग रही थी वे जहाँ बैठे थे वहीं बुदबुदा रहे थे 'श्री राम जै राम जै राम।'

महामंडलेश्वर मार्ग पर पंजाब से आए संतो की धूम थी। भक्त भी सलवार सूट वाले। हर शिविर के सामने कार और वैन। कहीं-कहीं अपनी ट्रक भी। गोया एक छोटा मोटा पंजाब। सभी स्वामियों के चोंगे मंहगे टेरीकाट के दिखाई दे रहे थे। स्वामी अरूपानन्द, सरूपानन्द, केवलानन्द, विनोदानन्द। सत्य और चारू स्वामी जी के शिविर में पहुँचे।

मासी तम्बू में नहीं थी। उन जैसी कुछ और महिलाएँ थीं। एक महिला अपनी मोटी सी रजाई में मुँह छिपाए लेटी थी। भनक पाकर उसने सिर्फ अपनी आँखें निकाली, 'अरे मेरास काका तो नहीं आया है।'

कत्थई कॉट्सबूल का सूट पहने हुई वृद्धा ने सत्य से कहा।

'तू पटेल चौक वाले दा मुंडा, ना। मास्टर जी दे घर दा।'

सत्य के हाँ करने पर वह प्रसन्न हो गई। उसने अपनी साथिन से कहा, 'मैं एस दे सारे टब्बर नूं जाणदी।'

चरनी मासी थीं नहीं। स्वामीजी का एक शिष्य पंडाल में उन्हें ढूंढ कर आया।

'वह अपनी सत्संगिन के साथ पास ही कहीं गयी हैं, आप लोग बैठो, आती ही होंगी।'

स्वामीजी की कुटी वाकई में पर्णकुटी थी। फूस के ऊपर मिट्टी की मजबूत परत लिपी थी, शामियाना प्रिन्ट के तम्बू के चारों ओर सफेद और भगवा कपडा लपेट उसे आश्रमी शक्ल दे दी गई। वहाँ गुदगुदे गद्दे, भगवा चादरें लाल और सफेद साटन की गद्दियाँ और गद्दियों पर मखमल के बने स्वास्तिक चिह्न थे। शिष्य की देह देखकर गुरू के स्वास्थ्य का अन्दाजा मिलता था।

अभी वे प्रस्तावित चाय के लिए ना ना ही कर रहे थे कि मासी वापस आ गईं।

'लै तू ऐत्थे बैठा है। मैं तैनू फोन करण पी सी ओ गई सी।'

'मुझे खबर मिल गई थी। कैसे टूटी ऐनक।'

अब तक मासी प्रसन्नी के कन्धे का सहारा लेकर मजे से काम चला लेती थीं। ऐनक का जिक्र आते ही उनके चेहरे पर उत्तेजना खिंच गई, 'मत पूछ की हो गया। मै तो मर चली सी। भला हो खाकी वर्दी वालां दा, मैनू खींच कर बाहर निकाला।'

तम्बू की कई औरतों की मिली जुली बातों से पता चला कि रात साढे तीन बजे तारा डूबने से पहले स्नान का मुहूर्त था। मासी और चार साथिने शिविर से स्नान के लिए निकलीं। उन जैसी उत्साही श्रद्वालुओं की खासी भीड थी। इसी समय शाही स्नान के लिए अखाड़े का जुलूस भी वहाँ पहुँचा। हालांकि पुलिस आम तौर पर अखाड़ों के स्नान के समय, मामूली स्नानार्थियों को जल में उतरने की इजाजत नहीं देती पर जो पहले से ही बीच धारा में स्नान कर रहे थे उनका क्या किया जाय। अखाडे के सवा सौ साधुओं ने आते ही प्रशासन के इन्तजाम की आलोचना आरम्भ कर दी। पुलिस ने माइक पर निवेदन किया कि सब स्नानार्थी गंगाजी से निकल आएँ पर इतनी जनता को निकालने में कम समय नहीं लगा। ऊपर से अखाडा प्रबन्धकों के हेकड़ तेवर। एक तरह से बीच धार से घाट तक भगदड सी मच गई। अधिकांश स्नानार्थी बूढे और अशक्त, गीले कपडे में लटपट न उनसे जल्दी धारा काट कर चला जाए न अपने कपड़े ढूंढे जायं। सैकडों बालू के बोरों के बावजूद यात्रियों के पैरों के दबाव से किनारे-किनारे खूब रपटन और कीचड़ तो थी ही। औरतें फिसल-फिसल कर वापस नदी में गिरीं। मासी उसी भगदड़ में फंस गयीं। किसी की कोहनी से चश्मे की कमानी टूट गई और लेन्स चटक गया।

मासी को वह सारा अनुभव फिर से याद आया। सत्य घबरा गया, 'मासी तुम घर चलो, यहाँ नहीं रहना। दो दिन घर में आराम कर लो, बहुत हो गया गंगा स्नान।'

'लै दो दिन तो मौनी मस्या है। वह तो मैं जरूर नहाना।'

'ठीक है उस दिन आ जाना।'

'उस दिन आणा नहीं होना, बहुत भीड आएगी। स्वामीजी ने कहा है कोई कैम्प से जाए ना।'

सत्य तिलमिलाता रहा सन्यासियों का भी शाही स्नान हो रहा है। शाही कोरमा, शाही पुलाव तो सुना था। शाही स्नान कभी नहीं सुना। काफी देर की निष्फल बहस के बाद यह सोचा गया कि सत्य एक ऐनक बनवा कर लाए और चारू यहीं कैम्प में स्के, मासी की देखभाल के लिए। मासी ने लाख समझाया कि इसकी कोई जरूरत नहीं पर वे लोग नहीं माने। 'तुम्हारे कपड़े भी मैं ला दूंगा' सत्य ने चारू से कहा।

चारू के लिए यह एकदम नया अनुभव था। दुलर्भ और जीवंत दृष्य। मनुष्य के आचार व्यावहार, श्रद्धा-भक्ति, दिनचर्या और कैम्प अनुशासन के बीच हिचकोले लेते अनेक सवाल और बवाल। पर इन सब में भी एक अद्भुत सह-अस्तित्व की भावना।

खूब घूमी चारू। कभी किसी कैम्प में तो कभी किसी कैम्प में। माइक पर मंत्रोच्चार, भजन और उद्घोषणाओं की त्रिवेणी प्रवाहित थी। 'काली सडक पर ठहरे मनमोहन वैश्य,भूले भटके शिविर में आ कर अपने मामाजी से मिलें जो गाजीपुर से आए हैं। रामघाट के पास तीन साल की एक बच्ची मिली है जो अपना नाम बेबी बताती है। उसके माता-पिता लाल सड़क पुलिस चौकी से उसे ले जाएँ।

'कुम्भ के शुभ अवसर पर पंडाल नंबर ११ में अखिल भारतीय कवि सम्मेलन का आयोजन है। आप सब महानुभाव पधार कर कविता का आनन्द लें।'

'सांस्कृतिक पंडाल में आज साम ऊसा नारायण का नाच होगा सभी आमंत्रित हैं, सब का स्वागत है।'

हर भाषा का भजन सुनने को मिल रहा था। मासी के कैम्प में भजनों के साथ-साथ भक्त और भक्तिनें नाच भी उठतीं 'मेरे श्याम नूँ रास विच नच लेन दे। नी, मेरे श्याम रात में भोजन के बाद अपनी-अपनी रजाइयों में समर्पित होने के बाद सत्संगिनें आध्यात्मिक गीतों की ओर उन्मुख हो जातीं 'मैं भूल गई दाता, मैं भूल गइयाँ, धर्म दा राह छड ओझड पइयाँ।

आज दी न भूली मैं कल दी न भूली। जनम-जनम दी आई हा रूदली।

सोच समझ कर देख ले मनुआ। सब नाल किसी दे न जइयाँ।'

कभी कोई देवी माता का मनचला गा उठता 'ट्रिं ट्रिं, मन्दिरों से मां ने टेलीफोन किया है।'

जिसे राम की धुन लागी वह राम नाम में लगा है। यानी हर एक के लिए वहां कार्यक्रम था। चुनाव की विशाल स्वतन्त्रता।

चारू को लगा बूढों के लिए रिलैक्स करने का इससे अच्छा स्थल हो ही नहीं सकता। सिर पर थी स्वामी जी की दी हुई सुरक्षा, पेट में भंडारियों का बनाया भोजन, स्नान को गंगातट और अंटी में रूपये जो परिवार ने पुण्य कमाने के नाम पर जी खोल कर दे रखे हैं। सबके चमकते चेहरे देखकर लगता था इनके लिए धर्म एक पिकनिक है और पुण्य एक गंगाजली जो ये अब अपने साथ ले जाएँगे, यादगार की तरह।

लेकिन सामान्य तीर्थयात्रियों का जीवन इतना सुखद नहीं बीत रहा था। मौनी अमावस्या की पूर्व साँझ से ही आकाश में बादल घिर आए थे। गलन बढती जा रही थी। शाम चार बजे से ही अँधेरा हो चला। लेकिन बिगडते मौसम और ठंड को धता बताते जनसमूह अभी भी उमडे चले आ रहे थे। कभी-कभी कोई यात्री दिखाई देता, पीठ पर अपनी वृद्ध, जर्जर दादी को लाद कर लगता श्रवण कुमार का छोटा भाई। कहीं कोई औरत अपने नन्हें से शिशु को आँचल की गर्मी में छिपाए पैदल चली आ रही थी। सबके मन में एक ही आस थी, मौनी अमावस्या पर बस एक डुबकी लगा लें, इन्हें पूर्ण विश्वास था कि अब तक के इनके जीवन में जो कुछ अधम-विश्राम हुआ है वह संगम की धारा में सुबह धुल-पुंछ कर उन्हें एक नया जीवन प्रदान करेगा और वे स्वर्ग में एक सीट आरक्षित करवा लेंगे।

चारू भारतीय जनमानस की आस्था के स्पर्श पाकर अभीभूत थी तो दूसरी तरफ साधू महात्माओं द्वारा परोसी जा रही पाप-पुण्य की इतनी तुरत-फुरत भुगतान पद्धति की स्थापना पर विस्मित। हर अखाडे का अपना सरंजाम। हर संत की अपनी पताका। बहुत से स्वामियों ने अपने-अपने बिल्ले जारी कर रखे थे। व्यवस्था पक्की। उनके

मैनेजर चुस्त घूम रहे थे। बिना बिल्लेवाला आदमी घुस नहीं सकता था। सबके अपने चौकीदार। अखाड़े के पहरेदार हनुमान मुद्रा में गदा हाथ में लिए हुए खडे थे। नागा साधुओं के प्रहरी बरछे लिए हुए।

महंतों के शरीर पर चर्बी के टायर चढे हैं, सन्यासी कृशकाय हैं। स्त्री साधुओं के चेहरे पर पुरुषों से ज्यादा तेज है। ब्रह्मकुमारी आश्रम में खूबसूरत कमसिन लड़कियों को योगिनी वेश में देखकर चारू को पीड़ा और जिज्ञासा दोनों हुई, बिना गहरे आघात के इस उम्र में कोई सन्यास नहीं लेता। पर यह सब पहली मुलाकात में पूछा भी नहीं जा सकता।

सबसे ज्यादा ग्लानि अपने ऊपर हो रही थी चारू को। उसी के नगर में इतना जन-समुद्र उमड पडा है और वह इन सब से अनभिज्ञ रही है। मासी न आई होती तो वह यहां झांकती भी नहीं। शायद उसके अन्दर पाप और पुण्य के सवाल अभी वैसी आँधी नहीं उठाते। उसे हैरानी थी कैसे जीवन के सबसे सूक्ष्म सवालों का इतना सरल और सार्थक कारोबार चलाया जा रहा था। अच्छे से अच्छा सैनिटरी एक्सपर्ट इस स्नान अभियान के आगे निस्तर हो जाता कि संगम में एक डुबकी न केवल इस जन्म के वरन जन्म-जन्मान्तर के पापों का मज्जन करती है। मानो एक बार आप नहा लें तो प्रतिदिन अपने आप पाप फ्लश आउट होते रहेंगे-पापों का 'सुलभ' इन्टरनेशनल इत्यादि।

मेले में विदेशी भक्तों की भी कमी नहीं। इस्कॉन का कलात्मक शिविर तो कृष्ण भक्तों से भरा पडा है। जब सूर के भजनों का कैसेट बजता है तो वे विभोर हो कर नाचने लगते लड़खड़ाने लगते हैं।

ठंड शॉल को लगातार परास्त कर रही थी। चारू ने एक जगह स्क कर ठेले वाले से एक कप चाय ली। उसके हाथ ठंड से इस कदर काँप रहे थे कि आधा कप चाय छलक कर फैल गई। अपने पर थोडा काबू पा उसने आश्चर्य से चाय की तरफ देखा। तभी किसी ने कहा, 'मे आय हैव द प्लेजर।'

एक विदेशी युवक था। उसने अपनी तरफ ऊंगली दिखाई, 'मी हैरी जॉन' गेरूए कुर्ते और जीन्स में वह कुछ-कुछ भव्य लग रहा था।

'यहाँ आकर कैसा लगा रहा है?'

'अच्चा, बोत अच्चा। शांति।'

'पर यहां मेले का शोर है।'

'बट देयर्स नो वायलेंस। आई फील हैप्पी हियर।'

सबका अनुभव हैरी जैसा सुखद नहीं था। उस दिन कप्तान साहब के कैम्प में चर्चा थी उस फ्रांसीसी लडकी अनातोले की जो चरस और मोक्ष के लालच में नागाओं के शिविर में चली गयी थी। एक बाबा जो काफी देर से दम लगाए बैठा था उसके पीछे पड गया। अनातोले वहाँ से बदहवास भागी तो सीधी पुलिस कैम्प में पहुँची। दो सिपाहियों के सरंक्षण में उसे उमेश तांत्रिक के शिविर में पहुँचाया गया। वह वहीं ठहरी हुई थी। गुरूजी ने उसे तत्काल कम्पोज की गोली दी, समझाया और सोने भेज दिया। दरअसल यह सारा मेला गुरू-परंपरा की स्थापना और पब्लिसिटी करता प्रतीत होता है। हर भक्त की अपने अपने गुरू में गहन आस्था। स्त्री भक्त तो गुरूओं की

कृपा के लिए जान लुटाने को आतुर। मासी अपने गुरू के पास ले गईं चारू को मत्था टेकने, 'गुरूजी महराज इसे आर्शीवाद दो, बहू है आपकी।'

मासी ने पहले से समझा रखा था, चारु ने ५१ रुपये से मत्था टेका।

स्वामीजी का चेहरा तरबूज की तरह लाल था। अपने सिंहासन पर असीन वे एक बडा सा तरबूज लग हरे थे। चारू को लगा यह एक दिव्य नहीं दम्भी गुरू का स्प है। लेकिन वे लगातार मुस्करा रहे थे।

'पूछो, पूछो कोई जिज्ञासा हो तो पूछो' स्वामीजी ने कहा। चारू ने साहस किया, 'ये लाखों लोग अपने पाप धोने आए हैं, क्या यह एक निगेटिव एक्ट नहीं है।'

'ये पुण्य की भावना से आए हैं, इनकी भावना शुद्ध है। साधारण लोग धर्म की परिभाषा नहीं जानते लेकिन पुण्य पहचानते हैं। श्रद्धा का रूप सत्कर्म है। सत्कर्म पाजिटिव एक्ट है।' मासी असीम आदर से स्वामी जी की बात सुन रही थीं। बीच-बीच में चारू की ओर इशारा करतीं 'देख लिया मेरे गुरू महराज कितने विद्वान हैं।'

चारू ने कहा 'आपकी समस्त भक्तिनें बुजुर्ग हैं, इन्हें आप यह क्यों नही समझाते कि बेटों का विवाह करते समय ये दहेज न लें, यह भी पाप है।'

'क्या तुम्हारे विवाह में दहेज लिया गया?' स्वामी ने प्रति प्रश्न किया।

'नहीं किन्तु, किन्तु परन्तु कुछ नहीं। परिवर्तन आ रहा है, पर धीरे-धीरे आएगा। तुम्हारी यह बात गलत है कि सिर्फ बूढियाँ ही हमारे कैम्प में आती हैं। हमारे पास विचार दर्शन है। आपकी पीढी के पास धीरज की कमी है। विप्पन इनको ११ नम्बर में ले जाओ।'

११ नम्बर में स्त्री साधुओं का कैम्प था। यहां गद्दे गुदगुदे और रजाइयाँ मखमली थीं। हर स्वामिनी ने फूस की दीवार में टूथपेस्ट और टूथब्रश खोंसा हुआ और कंघा और अखबार। स्वामिनी जम्मू और पंजाब की खबरें ढूंढ कर पढ रही थीं। दो एक महिला साधू शक्ल से नई और जूनियर लग रही थीं।

चारू चुपचाप नमस्कार कर बाहर निकली। एक साधुनी उसके साथ आई। पूछने पर उसने नाम बताया 'प्रेमदासी।'

'असली नाम?'

'यही'

'आश्रमी नाम?'

'यही'

तब दो युवा साधू दौडे-दौडे आए, 'मैनेजर साहब ने बुलाया है। देशी घी का कनस्तर खोलना है।'

'खोल रहे हैं, कोई भागे नहीं जा रहे।' साधुनी ने कहा।

'जल्दी चलो, यज्ञ की तैयारी करो जा कर।' साधू डपट कर चले गए।

साधू स्त्री ने दाँत पीसे, सब काम हमारे मत्थे डाला हुआ है। इनको तो चिलम चढ़ाकर गरमी आ जाती है, हमारा पूरा मरन है यहाँ। हम तो टेन्ट नं० ६ में हैं। रात में बालू की ठंडक से हड्डी, हड्डी जम गई है। घर से दूर आकर मिट्टी खराब किया हमने। पता चला ये स्त्रियाँ सारा दिन सेवा में लगी रहती हैं। इनकी दिनचर्या जो प्रयाग मे है वही हरिद्वार में, वही ऋषिकेष में। तारा डूबने से पहले स्नान करती हैं। स्वामी जी देर से उठते हैं। उनके उठने तक पूरे आश्रम की सफाइयाँ, हवन की तैयारियाँ, दूध चाय का इन्तजाम।

'कितना दूध पी लेते हैं स्वामी जी?' चारू ने शरारत से पूछा।

'पाँच सेर। एक बार में सेर पक्का पीते हैं।'

'कहां से आता है?'

'भगत लोग दे जाते हैं।'

'रोज?'

'किसी दिन कम आए तो राम घाट पे घोसी है।'

'बाजार की तरफ घूमी हो बडी रौनक है?'

'नहीं सेवा से फुर्सत नहीं।'

'रामलीला देखी? मुरारी बाबू का प्रवचन सुना?'

'नहीं सेवा जो करनी हुई।'

'इतनी सेवा करनी पडे तो शादी क्या बुरी थी?' चारू ने कहा।

'आदमी किसी काम का होता तो यहां क्यो आती?'

'पति-सेवा और संत सेवा में कोई फर्क दिखता है?'

'बिल्कुल। स्वामीजी कभी हाथ नहीं उठाते, मीठा बोलते हैं। आदमी बात-बात पर लडता था। कौन जनम भर मार खाता। यहां चैन है।'

'घर कब छोडा?'

'ग्यारह साल पहले।' तभी अन्दर से स्वामी जी की आवाज आई 'प्रेमदासी।'

कंपकपाती ठंड के बावजूद मेला क्षेत्र में ठंड कुछ कम लगती थी। इतने इंसानों की एक दूसरे से निकटता, उनकी सांसो की गर्मी और असंख्य बल्बों की रोशन-गर्माहट।

इस बीच शिविर में एक भव्य सी युवती आई स्वामी मौन सुन्दरी। उसने ३१ साल की ही उम्र में संसार से विरक्त हो कर सन्यास ले लिया। लेकिन अभी वह पूरी तरह से सम्प्रदाय में समायी नहीं है। बीच-बीच में विदेश चली जाती है। उसका गेटअप प्रभावशाली था। नौ मीटर का गेरुए पालियेस्टर का गाउन देखने में ड्रेसिंग गाउन ज्यादा लग रहा था। बालों में लाल मेंहदी। होंठों पर नेचूरल शाइन कलर। नाम के विपरीत वह मुखर सुन्दरी निकली। चारू से बहुत जल्द खुल गई। उसके बोलने का अंदाज बडा आकर्षक था हालांकि बातों में परिपक्वता की कमी। आपका ध्यान जरा भी भटका कि वह कहती 'यू आर नॉट वाइब्रेटिंग विद मी।'

उसने बताया 'आय एम स्टिल सर्चिंग ए परफेक्ट गुरू। आय हैवन्ट फाउंड।'

'आप अपना समय नष्ट कर रही हैं।' चारू ने कहा। उसे अफसोस हो रहा था कि इतनी अच्छी महिला एक व्यर्थ तलाश में तल्लीन है। इसे तो जिन्दगी के बीचोंबीच होना चाहिए।'

मौन सुन्दरी ने कहा 'कल मौनी अमावस्या है। हम सब को मौन रहना है। आज सारी रात मैं बोलूँगी। तुम सुनोगी।'

'एज लांग एज आय वाइब्रेट।'

'अच्छे हैं, पर अहंकारी।'

'इससे पहले कहाँ थी?'

'स्वामी रामानन्द की साथ। वे भी अच्छे थे पर उन्हें भी देह की दानवी भूख थी। टेल यू। एक रात मैं उन्हें जे कृष्णमूर्ति की फिलासफी समझा रही थी। मुश्किल से नौ बजे थे। उन्होंने मेरे चोंगे में हाथ डाल दिया। बाय गॉड। मैने प्रोटेस्ट किया तो बोले 'कौन देखेगा। किसी को पता नहीं चलेगा।'

मैंने उन्हें बदनामी का डर दिलाया। वे हंसे, 'कैम्प में सब बुढिया भक्तिन हैं, खा पी कर सोई हैं।' मै विरक्त हो गई 'मेरा शरीर मेरा है, मै इसका बदइस्तेमाल नहीं होने दूँगी।'

'क्या फर्क पडता है, जब तुम कुंवारी नहीं हो' कह कर वे मुझ पर हावी हो गए।'

'उस अनुभव के बाद तो मैं सिनिक हो गई। कनखल में उन्हें ढूंढती मैं गाती रहती 'कहाँ गिराई चढ्डी मैंने, कहाँ गिराई चोली मैं तो राम नाम मय होली।'

चारू विस्मित श्रोता बनी रही, स्वामी मौन सुन्दरी ने कहा, 'जानती हो, एक मिनट को यहाँ बत्ती चली जाती है तो कितने बलात्कार हो जाते हैं इस बीच।'

'यू आर ऑब्सेड' चारू ने कहा। उसे यह मौन नहीं मुखर सुन्दरी लगी।

'यू आर कैलस' स्वामी मौन सुन्दरी ने कहा।

मौनी अमावस्या पर भीड उमड़ी और घटाएं घुमड़ीं। आठ बजते तक बारिश शुरू हो गई। जो बारिश से पहले नहा लिए, वे तो सकुशल अपने कैम्प लौट आए। मुश्किल बाद में जाने वालों की हुई। चारू सुबह कैम्प के नल पर नहा ली। वह भी गंगा जल ही था आखिर। पर तट घूमने का मोह व नहीं छोड सकी। एक की जगह दो-दो शॉल बदन पर लपेट कर वह जाने लगी तो चरनी मासी ने टोका, 'इकल्ली कहाँ जा रही है, गँवा जाएगी।'

'मैं सुई नहीं मासी।'

'मैं चलां नाल।'

'ना बाबा, आपसे चला जाता नहीं, गिर जाएँगी।'

मौन सुन्दरी ने साटन की रजाई से अपना सिल्की चेहरा निकाला, 'मैं चलती हूँ ठहरो।'

उसने झटपट गाउन पहना, लम्बे बालों की उँची नॉट बनाई, गेरुए रंग की चप्पलें पैर में डाली और तैयार हो गई। सन्यास में भी वह विन्यास के प्रति सचेत थी।

भक्तों के उमडते रेले देख कर वह प्रफुल्ल हो गई, 'देखो चारू मैं इस प्रोफेशन को क्यों पसंद करती हूँ। इस करोड की भीड़ में अगर पांच लाख भी मेरे अनुयायी बन जायं तो मैं दूसरी रजनीश मानी जाऊँ। है इतनी सम्भावना और किसी पेशे में ?'

'अध्यात्म को पेशे के रूप में लेना गलत है।' चारू ने आहत हो कर कहा, 'यह तो अन्दर की आस्था से विकसित होने वाली वैचारिक, आत्मिक सामर्थ्य है।'

'शिट, इट्स ए प्रोफेशन। तुम यहाँ रहती हो और तुम्हें खबर ही नहीं। यह इस समय मिलियन डॉलर प्रोफेशन है।'

ज्यादा बात करना सम्भव नहीं था। भीड़ उन्हें कभी आगे तो कभी बगल में धकेल रही थी। लोग जैसे एक धुन में बढ़े चले जा रहे थे।

रास्ते में पुलिस के पथ-प्रदर्शकों की मदद से वे काफी आगे सही दिशा में पहुँच गई। अद्भुत दृश्य उपस्थित था, एक पसारा-स्नान- ध्यान- अर्पण- तर्पण- दान- पुण्य का। एक नाववाले से पूछा। उसने किराया बताया पन्द्रह रुपये सवारी। चारू ने कहा, 'नगरपालिका ने तो तीन रुपये सवारी रेट बनाया है।'

'तीन रुपये तो सिपाही ले लेते हैं।' नाव वाले ने कहा।

नाव यात्रियों से खचाखच भरी थी। वे दोनों भी सवार हो गईं। बारिश अब भी हो रही थी। एक तरह से सबका स्नान हो रहा था फिर भी संगम की धारा का स्पर्श पाने को आतुर थे स्नानार्थी।

नहा कर गीले कपडों में ही सब नाव पर सवार हो गईं। सबने अपनी गंगाजली भी संगम जल से भर ली। कृशकाय मल्लाह पूरी ताकत से नाव खे रहा था लेकिन नाव का संतुलन गड़बड़ा रहा था।

उन्होंने देखा स्त्रियाँ मौन भाव से बैठी थी, सबकी मुख मुद्रा शान्त, अविचलित।

अभी तट दूर ही था कि नाव एक ओर बिल्कुल ही झुक आई। लगा कि जल समाधि मिलने में बस क्षणांश का ही विलम्ब है।

मौन सुन्दरी और चारू के मुँह से चीख निकली 'बचाओ, नाव डूब जायगी भैया।' मल्लाह अपने दोनों पैरों की बीच वृहत्तर अंतराल दे दोनों ओर के चप्पू चला रहा था। शेष स्त्रियाँ कैसे बोलें, उन्होंने मौनव्रत धार रखा था इस घड़ी। पर उनकी आँखों में दहशत उतर रही थी।

मौन सुन्दरी नाव में खडी हो गई, 'अरे कोई है, नाव डूब रही है, मर जाएँगे हम सब लोग।'

स्त्रियों ने त्योरी चढ़ा कर इन दोनों महिलाओं की ओर देखा। शोर मचा कर ये अपने प्रति पाप का प्रयोजन जुटा रही थीं। साथ ही उनके व्रत में भी विध्न डाल रही थीं। जो स्त्रियाँ उठंग छोर पर आसीन थीं, आग्नेय दृष्टि से उन्हें देख रही थीं।

तभी संकट पहचान कर रिजर्व पुलिस की मोटर बोट उनकी नाव के साथ आ सटी। सिपाहियों ने सहारा दे कर उभी सवारियों को मोटर बोट में पहुँचाया। दो वृद्धाएं पानी में फिसल गई थीं। उन्हें भी बचा लिया गया।

रिजर्व पुलिस की मोटर बोट बिना रोक टोक किनारे पहुँच गयी।

चारू ने देखा सभी सवारियाँ एक दूसरी के गले लग कर रो रही थीं, मौन रोदन, जिसमें शब्द की जगह सिसकियाँ थीं, अश्रु की जगह आँखों में भय। चारू ने खैर मनाई कि मासी बारिश के पहले आधी रात के मुहूर्त में ही स्नान कर आईं। वे साथ होतीं तो दहशत से अधमरी हो जातीं।

मौन सुन्दरी रास्ते भर वापसी में स्त्री स्नानार्थियों की मूढ़ता और निरीहिता पर खीझती रही।

'हैरानी तो यह है कि यह इन स्त्रियों का स्थायी भाव नहीं है। अपने घरों में ये अपने बेटे-बहुओं को खूब डपटती होंगी, पातों-पोतियों को घुड़कती होंगी पर इतनी सारी अग्निमुखी, उग्रमुखी औरतें, संतो के आदेश पर होंठ सिल लेंगी, जान निकल जाय पर बोलेंगी नहीं।

लौट कर शिविर का भोजन रोज से स्वादिष्ट लगा। चार-पाँच घन्टों की कवायद जो हो गई। राजमा, गोभी मटर की सब्जी और गाजर का हलवा बना था।

चारू से अलथी-पलथी मर कर नहीं बैठा जाता। जैसे ही उसने कौर तोडा, खाना परोसने वाले सेवादार ने डाँटा, 'उल्टे पांव पंगत में बैठी हो, कहाँ से आई हो। भोजन का कायदा नहीं मालूम।'

'पैरो में दर्द है, पलथी नहीं लगती।'

पास बैठी बलिष्ठ औरत ने झट उसके पांव खोल पालथी लगा दी, 'नहीं उलटे पांव पंगत में नहीं बैठ सकते।'

इस मौनी अमावस्या का महात्म्य और भी बढ गया क्योंकि यह सोमवार को पडी, सोमवती मौनी अमावस्या।

अगले दिन का तुमुल नाद पिछले दिन के मौन का उपहास करने लगा।

गौरां ने सवेरे ही विलाप करना शुरू कर दिया, 'हाय नी मैं मर जावां, कल नहां दे वेले कोई मेरी कलाई से कड़ा उतार कर ले गया। पूरे चार तोले दा सी।'

सत्या और गौरां का दिन रात का साथ था। दोनों होशियारपुर की थीं।

'तेरे हाथ में तो रुमाल बंधा था। कडा कदौं पाया सी।'

'लै मैं झूठ बोल दी हं।' पानी गंदला था। रेत की दलदल में कमर तक धंस गई थी गौरां। दो आदमियों ने पकड कर निकाला उसे। कैम्प में लौट कर टोटी के नीचे नहाई।

'कल तो तूने बताया नहीं?'

'संतो ने कहा था चुप रहना, किद्दा दसदीं।'

सबने हिसाब मिलाया। सबके चेहरे पर बदहवासी। पन्डे से लेकर नाव वाले तक ने लूटा, बचा खुचा गंगा मैया ने। डुबकी लगाई, गले से कंठी गायब। कहाँ गई, कुछ खबर नहीं। कोई अचानक से उतार ले गया। हवा से भी हलका हाथ रहा उसका। रपट क्या लिखाएँ। कुछ पता हो तब न। कहाँ गिरी, किसने छीनी। करमां दियाँ गल्लां। लाल सड़क पर स्वामी सुरेशानन्द के शिविर के बाहर एक औरत बिलख-बिलख कर रो रही हे। नाम अमरो, जिला जालौन। पति साथ आया था। कल की धकापेल में बिछुड गया। जमां पूंजी उस उसी के पास है।

एक सिपाही उसे भूले भटके शिविर में बैठा आया। लाउडस्पीकर पर उसके पति के लिए मुनादी करवानी थी। 'एनाउन्सर ने पूछा, 'आदमी का नाम?'

'हाय दैया कैसे बोलें।'

'नाम नहीं बोलोगी तो बाजे पर क्या बोलेंगे हम, कौय आय।' अमरो धोती का सिरा दाँतो से दबा लेती है।

'अच्छा नाम नहीं ले सकती तो कुछ अता-पता दो।'

अमरो आसमान की ओर इशारा करती है।

'सूरज'

'ना'

'चाँद'

'उई दैया।'

नाम बोला जाता है चंदादीन।

दो दिन बीत गये। अमरो का पति नहीं आया। प्रशासन का कारिन्दा कहता है 'रेल का किराया देंगे, घर चली जाओ।'

'नाहीं। जब तक बुलाने नहीं आएँगे वह नहीं जायेगी, सात फेरे वाली हैं हम, कोई नचनी पतुरिया नहीं। गंगा मैया हमार भतार भेजें नहिं हम ऐहि मां कूद कर पिरान दे दैवे।'

न जाने कितनी अबोध लडकियाँ पाई गइ हैं कल। गंगा स्नान के बहाने घरवाले लाये थे घर से, और छोड गए मंझधार। जल पुलिस ने बताया- 'बाइस'।

ये सब पीड़ा के प्रसंग हैं। इनके सही आंकडे और ब्योरे प्रशासन की फाइलों में हैं।

मासी की ऐनक बन कर आ गयी है। सत्य के स्कूटर पर वापस घर जाते समय चारू सोच रही है, इतना विशाल मेला क्या कुछ भी कलातीत सिखा पायेगा या सब वैसे के वैसे अपने संकीर्ण सरोकारों में वापस हो जाएँगे। जो झूठ बोलता था, बोलता रहेगा, जो घूस लेता था, लेता रहेगा, जो मिलावट करता था, करता रहेगा, जो चोरी करता था,करता रहेगा, और जो कामचोरी करता था करता रहेगा। औरतों की जीवन में इस एक डुबकी से क्या हो जायेगा। उनकी हालत बदलेगी? गंगामाई में पाप सचमुच धुले या यह भी एक सरलीकरण है जिसकी स्वीकृति में ही फिलहाल निष्कृति है।

शीर्ष पर जाएँ